Int. J. Reviews and Research in Social Sci. 4(2): April–June, 2016

www.anypublication.org

ISSN 2347-5145 (Print)
2454-2687 (Online)

RESEARCH ARTICLE

शिवानी की कहानियों में स्त्री अस्मिता का संघर्ष

निधि कौशिक
शोधछात्रा, हिन्दी, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर छत्तीसगढ़
*Corresponding Author E-mail:

ABSTRACT:

Pl prvide abstarct and key words

KEYWORDS:

हिन्दी की सर्वाधिक लोकप्रिय कथा लेखिका गौरा पंत 'शिवानी' जन्मी भले ही गुजरात में पर उनके व्यक्तित्व में कुमाऊँ एवं बंगाल का संस्कृति का अद्‌भुत मिश्रण रहा है। उनकी बहुत सी कथा–कहानियों में जहाँ एक ओर कुमाऊँनी अंचल के लोक–जीवन का सुन्दर और .सटीक चित्रण मौजूद है वहीं उनकी रचनाओं में तत्सम, समासयुक्त शब्दावली के साथ–साथ बांग्ला साहित्य और बांग्ला भाषा का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है। इस प्रभाव के पीछे शिवानी के अपने पारिवारिक तथा वे प्रारंभिक शिक्षा संस्कार थे, जो उन्हें शांति– निकेतन आश्रम में नौ वर्षों के शिक्षाकाल में मिले। इसी पृष्ठभूमि ने उनकी लेखनी को सशक्त और रचनाओं को संवेदनशील बना दिया है। शिवानी जी ने हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में अपने बहुआयामी व्यक्तित्व का परिचय दिया है। इन्होंने उपन्यासों के साथ–साथ कहानी, संस्मरण, रेखाचित्र, निबन्ध, रिपोर्ताज, यात्रा–वृतान्त, इतिहास एवं बाल–साहित्य की रचना कर हिन्दी–साहित्य की विपुल समृद्धि प्रदान की है। अपने साहित्य–सृजन के उद्‌देश्य के संबंध में शिवानी जी स्वयं कहती हैं–"मेरे साहित्य–सृजन का मुख्य उद्‌देश्य यह रहा है कि समाज के विभिन्न क्षेत्रों में फैली अराजकता, भ्रष्टाचार, अनाचार, कुरीतियों एवं विसंगतियों को आम जनता जाने और समझे। ऐसा साहित्य रचा जाए जो जन साधारण को भी ऊपर उठाये। साहित्य आदर्शोन्मुख एवं वास्तविक हो, जिनसे जन–समुदाय का कल्याण हो।"

शिवानी जी ने अपने कथा–साहित्य में नारी को केन्द्र बिन्दु में रखा है। शिवानी जी की एक–एक कहानी चाहे कृष्णकली, कालिन्दी, 'पूतों वाली' कोई भी हो,

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

नारी संवेदना की मार्मिकता अन्तर्वेदना को जिस आत्मीयता एवं गहराई के साथ महसूस किया है वह अतुलनीय है। नारी संवेदना को रोचकता से गूँथने की कला–मर्मज्ञ थी–शिवानी। नारी भावों–अनुभवों के कैनवास पर नारी मन के विविध पन्नों की अन्तरंग अनुभूतियों की अद्भुत छटा अपनी लेखनी के जरिए बिखेरती है। शिवानी नारी की विभिन्न भूमिका को स्वीकार करती हुई भी उसकी एक स्वतन्त्रचेता अस्तित्व की हिमायती दिखाई देती है। उनका मानना है–"नारी को मैं रवीन्द्रनाथ के शब्दों में न केवल देवी रूप में पूजी जाना चाहती हूँ, न पूर्ण समर्पिता। उसका अपना आत्म–सम्मान अक्षुण्ण बना रहें नारी का सौष्ठव आहत न हो।" अपने हर चरित्र में काया प्रवेश करती शिवानी उस जिन्दगी को जैसे उसी चरित्र के साथ जी लेती है। उनकी कल्पना के धागे में मोतियों से पिरोये शब्द पाठक के हृदय पटल पर गहराई से अपनी छाप छोड़ते हैं। नारी जीवन की त्रासदियों के बीच समाज निर्धारित मानदण्डों की कड़ियाँ उसके चरित्र से जोड़ती शिवानी पुरुष के साथ उसके संबंधों में एक प्राकृतिक व नैसर्गिक जरूरत को हमेशा महत्त्व देती हैं जिसका समावेश प्रेम के चरम बिन्दु के रूप में होता है। स्त्री–पुरुष के संबंधों में प्रेम के महत्त्व को वे कभी स्वार्थ से नहीं जोड़ती। उनकी नायिकाएँ प्रेम का उच्च आदर्श उपस्थित करती है। शिवानी स्मृति विशेषांक में डॉ. अमीता श्रीवास्तव लिखती हैं–"शिवानी हिन्दी की उन बड़ी कथाकारों में से हैं जिन्होंने अपने पात्रों को बड़ी ममता और संवेदना से रचा है और उन्हें करूणा का ऐसा अक्षय कोष सौंप दिया है कि वे हमें बार–बार मानवीय करूणा और विडम्बना की डबडबाई आँख के आगे ला खड़ा करते हैं। उनके पात्र अपनी संवेदना की अजस्र धारा में बहा ले जाते हैं कि उनका कोई भी उपन्यास एक बार शुरू कर देने के बीच में कहीं छोड़ देना असंभव है। हम मानों करूण नियति झेल रहे उनके पात्रों के साथ–साथ ही थपेड़े खाते हुए कथा के अंत तक पहुँचने के लिए विकल हो उठते हैं। यही शिवानी के कथा–साहित्य का जादुई सम्मोहन है, जो पाठकों की विभिन्न संवेदनाओं के द्वारा इस कदर बाँध लेता है कि शिवानी के उपन्यास पढ़ लेने के बाद बार–बार उनके अन्य उपन्यास तलाशने में जुट जाते हैं।" शिवानी जी को स्त्री जीवन की गहरी समझ है जो कुछ अधूरा छूटा रह गया उसे भी लेखिका ने अपनी वैचारिक चेतना के जरिए तलाशा और उनकी ये तलाश एक मुकम्मल सोच के रूप में उनकी रचनाओं में दर्ज होती चली गयी।

स्त्री अस्मिता की तलाश

नारी संवेदना की विरली लेखिका शिवानी स्त्री–जीवन का अद्भुत रूप अपनी कलम की जादूगरी से बिखेरती चलती है। शिवानी जी ने नारी–चित्रण में भाभियाँ, बहनें, बेटियाँ सभी को केन्द्र में रखा है। स्त्री जीवन में प्रेम के महत्त्व को वह बखूबी समझती है और सबसे बड़ी बात यह है कि उसे वैवाहिक बंधनों से मुक्त रखकर उसकी नैसर्गिक प्रकृति पर नाटकीयता का मुलम्मा नहीं चढ़ाती। उनकी कथावस्तु यथार्थ की चेतना पर आधारित है। शिवानी ने नारी के कमजोर पक्ष का विश्लेषण कर उसकी मार्मिक वेदना में करूणा का मिश्रण तो करती है किन्तु पुरुष के नाम पर तीव्र घृणा का संचार कर दोनों के बीच गहरी खाई का निर्माण वो नहीं करती। वह बेहद संतुलित ढंग से नर–नारी के संबंधों में सुधार की हिमायती है। पर जहाँ उद्वेग तीव्र हो वहाँ स्त्री का उग्र रूप भी सामने जरूर आता है। नारी–मन के हर रंग से चिर परिचित शिवानी हर क्षण अपने चरित्रों के साथ बोलती–बतियाती दिखायी देती है। वे अपनी कथाओं के माध्यम से स्त्री की उन विशेषताओं को रेखांकित कर, विश्लेषित देती हैं जिन्हें आम आदमी नहीं देख पाता। 'केया' कहानी का एक उदाहरण दृष्टव्य है, "सामान्य–सा परिचय भी एकांत के साहचर्य में दो स्त्रियों को ऐसे घुल–मिला देता है, जैसे वे वर्षों की पूर्वपरिचित हों। अपने हृदय के अन्तरतम कक्ष की कुंजी फिर दूसरी को थमाने में नारी नहीं हिचकती, ऐसा निष्कपट आत्म–निवेदन, कभी किसी पुरुष के लिए सम्भव नहीं होता। पुरुष क्या स्वभाव से ही सजग शंकालु नहीं होता? गहन मैत्री या पतिव्रता पत्नी का एकनिष्ठ प्रेम भी क्या उसे पूर्ण रूप से कभी आश्वस्त कर सका है? जहाँ प्रिय वाक्य प्रदानमात्र से ही किसी नारी का विश्वास प्राप्त किया जा सकता है, वहाँ पुरुष–हृदय की गहराई सहज में ही नहीं नापी जा सकती। नारी के इसी स्वभाव–दौर्बल्य का तो संसार आए दिन लाभ उठाता है।" उनके कथा–साहित्य के स्त्री पात्र स्त्री–जीवन की विराट झाँकी प्रस्तुत करते हैं। शिवानी जी ने 'शिबी', 'दर्पण', 'लाल हवेली', 'अपराधी कौन', 'विप्रलब्धा', 'दो स्मृति चिह्न', 'चिर स्वयंवरा', 'करिए छिमा', 'मधुयामिनी', 'केया', 'भिक्षुणी' आदि कहानियों के माध्यम से नारी–मन के हर कोने

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

व झरोखे में झाँकने की एक सफल कोशिश की है। शिवानी जी को स्त्री जीवन की गहरी समझ है जो कुछ अधूरा छूटा रह गया उसे भी लेखिका ने अपनी वैचारिक चेतना के जरिए तलाशा और उनकी ये तलाश एक मुकम्मल सोच के रूप में उनकी रचनाओं में दर्ज होती चली गयी। और भाषा ऐसी कि बस आप मंत्रमुग्ध हो बार–बार उसकी तरफ किसी तरह खिंचते चले जाते हैं। शिवानी जी की लेखनी से हिन्दी के पाठक वर्ग सुपरिचित हैं। उनके कहानी–उपन्यासों ने समाज के जीते–जागते पात्रों को उठाकर उन्हें अमर कर दिया है। शिवानी ने कृ ष्णकली, सुरगंमा, और किशुनली की 'ढांढ' आदि उपन्यास में कुछ ऐसे पात्रों को उभारा है जो पाठकों की नजर में अनायास ही चढ़ जाते हैं और कथा समाप्त होने पर हमारे चित पर अमिट छाप छोड़ जाते हैं। शिवानी जी जहाँ पात्रों को कृत्रिम ढंग से भला बनाने और हृदय–परिवर्तन करने का प्रयास न करके उसे उसके अकृत्रिम और यथार्थरूप में पेश करती हैं, वही उनका चरित्र चित्रण अधिक सुन्दर बन पड़ता है। उनकी चरित्र–सृष्टि यथार्थवादी है। इनके पात्र हमारे आस–पास के जीते–जागते पहचाने जाने वाले पात्र हैं। इनके आदर्श पात्रों में भी मानवोचित दुर्बलताएँ दिखाई देती है और बुरे–से–बुरे पात्रों में भी अपनी सदप्रवृत्तियों के आयाम अनुभव करते हैं। आन्तरिक संघर्ष एवं द्वन्द्व प्रायः सभी पात्रों में पाया जाता है। इतना ही नहीं पात्रों के चित्रण को चित्रोपम रूप प्रदान करने में शिवानी सिद्धहस्त हैं। बारीक–से–बारीक रेखाओं की मांसलता और वर्णन की सूक्षमता से प्रत्येक चरित्र प्राणवान बन उठता है और वह सहज ही नहीं भुलाया जा सकता। किशुनली, अनसूइया, हीरावती आदि ऐसे चरित्र है जो पाठक की संवेदना से जुड़कर उसकी स्मृतियों में बस जाते हैं। शिवानी ने अपने पात्रों के माध्यम से नर–नारी को भीतर से जानने की कोशिश की है।

शिवानी ने कथा–साहित्य में सामाजिक समस्याओं जैसे–दाम्पत्य जीवन, प्रेम समस्या, रखेलप्रथा, वेश्या जीवन, अवैध मातृत्व, वैवाहिक समस्याओं–दहेज प्रथा, बेमेल विवाह, बाल–विवाह, विधवा समस्या, वृद्ध समस्या आदि को वर्ण्य विषय बनाया है जो दृष्टव्य है। वर्तमान में पनपने वाली गंभीर समस्या वृद्ध समस्या है। आधुनिक जमाने में वृद्धों को भार समझा जाता है। नयी पीढ़ी पढ़–लिखकर, अपनी नौकरी से जुड़ने के कारण घर–परिवार से असंपृक्त होने लगी है। विवाह होते ही माँ–बाप को छोड़कर चले जाना आम बात हो गई है। बेटों के होते भी माता–पिता को बेघर, वृद्धाश्रम में जीवन जीना होता है। शिवानी जी की 'दो सखियाँ' कहानी इस समस्या को गहराई से पूरी संवेदना के साथ रेखांकित करती है। ये कहानी वृद्धाश्रम में जीवन बिता रही विभिन्न महिलाओं के जीवन को केन्द्र बनाकर लिखी गई है। सखुबाई, आनंदी, गुरुविंदर कौर सभी पात्रों की अपनी एक अलग कहानी है, जो समाज से तिरस्कृत होकर वृद्धाश्रम में जीवन बीता रहे थे। एक बेटे और दो बेटियों की माँ होते हुए भी आनंदी जैसी वृद्ध महिला को वृद्धाश्रम में रहने को मजबूर होना पड़ता है। "सखुबाई को लगता, उसके पुत्र से भी अधिक जघन्य अपराध आनंदी की संतान ने किया था। ऐसी संत निरीह जननी को कैसे यहाँ एकदम अनजान परिवेश में ढकेल दिया। चार वर्षों में कुल दो बार उसकी बेटियाँ उससे मिलने आयी थीं–अलबत्ता चिट्ठियाँ और नववर्ष के कार्ड आ जाते। होली के दिन पत्ता भी हिलता तो आनंदी चौकन्नी हो जाती। उस दिन 'आश्रम' के कई भाग्यशाली बुजुर्गों के आत्मीय स्वजन उन्हें अबीर–गुलाल का टीका लगाने आते। आनंदी की बेटियाँ तीन होलियों से माँ से मिलने नहीं आयी थी। फिर भी कहीं–न–कहीं आशा की टिमटिमाती ज्योति को आनंदी हथेली की ओट से बचाए सेंत रही थी।" ऐसे में वृद्ध आनंदी की मौत होने पर जब आनंदी की पुत्रियों को खबर दी गई, उस समय वे दोनों परिवार सहित बैंकाक घूमने गई थी। 'हमारी माँ का बक्सा सँभालकर रख दें–हम लौटने पर ले लेंगी।' "एक सुखबाई ही जानती थी उस सूटकेस में क्या है–चार सूती इकलाई धोतियाँ, तीन पेटीकोट, चार कुर्तियाँ, दो चादर, एक टूटा चश्मा, वर्षों से बंद पड़ी एक अलार्म घड़ी और बैंक की पासबुक, जिसमें कुल जमा थे सत्ताइस रुपये बावन पैसे!..... यह उस बेटे की माँ की विरासत थी जिसे महीने में बीस हजार का वेतन मिलता था, जिसका अपना अपार्टमेंट था, स्विमिंग पूल था, तीन–तीन गाड़ियाँ थी। उन दामादों की सास की विरासत थी जिनके घरों में कुबेर का छत्र बड़ी गहराई तक धँसा था।" ऐसे वृद्धजनों के प्रति शिवानी जी में अपार संवेदना दिखाई देती है। आज की युवा पीढ़ी उनकी देखभाल से उदासीन होती जा रही है बल्कि पूर्णतः विमुख हो चुकी है। शिवानी की कहानी 'भूमि–सुता' में अनुराधा की अपने बेटे रजत की उदासीनता के कारण स्मृतिभ्रष्ट तक हो जाती

Scanned with CamScanner

है। रजत अपने पिता की मौत की खबर सुनकर भी नहीं आता। ओर एक दिन जब रजत आता है तो घर का सारा सामान औने–पौने दामों में बेच जाता है। बीमार माँ अनुराधा को देखभाल के लिए आपने साथ ले जाने की बजाय कलकत्ते के चैशायर ओल्ड होम में छोड़ आने का प्रस्ताव रखता है। निराश्रित होने का आतंक अनुराधा की निरीह आँखों में सदा के लिए जम गया था–कहाँ जाएगी वह? कभी कमरे में लावारिस लाश–सी पड़ी रहीं तो? कौन देगा उसे मुखाग्नि? यह सोच–सोच कर भंयकर बिमार हो गयी। उनकी दत्तक पुत्री सुता जब माँ की इस स्थिति को देखती है। "सुता जानती थी उस बीमारी का कारण क्या है। विदेशों में सन्तानों की उदासीनता से पीडित, निष्कासित, ओल्ड होम में डाल दिए गए बूढ़े माँ–बाप, क्या वह हाइडपार्क की बेचों पर स्वयं शून्याकाश को निहारते नहीं देख चुकी है? सन्तानप्रदत वे ही अकृतज्ञ आघात उन्हें धीरे–धीरे विस्मृति के गर्भ में डूबों देते हैं। एड्स की भाँति, अब यह बीमारी भी भारत में रेंग आई है। रजत और उसकी पत्नी के दिए गए अदृश्य आघातों के नासूर क्या एक आध थे?" इन पंक्तियों में शिवानी की कलम वृद्धजनों की होती दुर्दशा और संबंधों में बँटती गर्माहट को भी रेखांकित करती है।

शिवानी अपने कथा–कहानियों में देहज जैसी सामाजिक बुराई और उसके दुष्प्रभाव पर भी प्रकाश डालती है। वो अपनी अनेक कहानियों और उपन्यास में दहेज लोलुप व्यक्तियों का चित्रण करती ही है, साथ ही ये भी बताती है कि दहेज के अभाव में या दहेज कम दिए जाने के मामले में कितनी मासूम लड़कियों को अपनी जान तक खोनी पड़ती है। दहेज के कारण ही समाज में बेमेल और बाल विवाह जैसी समस्याएँ पैदा होती है। समाज में दहेज का ये अभिशाप आज ओर भी गहराता जा रहा है। 'श्राप' कहानी के एक प्रसंग में लड़की के पिता शिवानी जी को कहते हैं, "हम लोगों के लिए अच्छे लड़कों के लिए अच्छी–खासी रकम देनी पड़ती है। दुर्भाग्य से हम कान्यकुब्ज ब्राह्मण हैं, हमारे यहाँ एक प्रकार से रटे बँधे हैं, आई.ए.एस. लड़का है तो सवा लाख, आई.पी.एस. तो एक लाख, इंजीनियर है तो अस्सी हजार और फिर साधारण नौकरीवालें के लिए भी कम–से–कम बीस हजार, उस पर दहेज अलग, डॉक्टर लड़के तो कन्धे पर हाथ नहीं धरने देते। यानी जैसा दाम खर्च कर सको वैसी चीज लो।' "तो आपको इस रिश्ते में भी रकम भरनी होगी?" मैंने पूछा। "और नही तो क्या? पर ये शरीफ हैं, इन्हें लड़की पसन्द है, कुछ नहीं माँगेंगे, हम अपनी बिटिया को जो देना चाहें दे।' बड़े गर्वजन्य संतोष से उनका शान्त चेहरा दमक उठा। बेचारे शायद इस कटु सत्य से अनभिज्ञ थे कि मुँह से कुछ न माँगनेवाले ही कभी–कभी मुँह खोलकर सब कुछ माँगनेवालों से भी खतरनाक होते हैं। शिवानी जी के इस कथन की अन्तिम बात में निर्मम सच्चाई थी। कहानी के अगले ही हिस्से में समधियों का लालच सामने आ जाता है। लड़की के पिता एक पल को चुप रहे फिर रुंधे गले से बोले, "कैसे विचित्र लोग हैं, पहले स्वयं कहा कि कुछ नहीं लेंगे, केवल कन्या के हाथ पीले कर, उन्हें सौंप दें। अब चलते–चलते पैंतरा बदल लिया। मुँह खोलकर कहते तो हम उनकी वह माँग भी पूरी कर देते। अब दिव्या की चिन्ता लगी रहेगी–बहुत भोली है।" "आप चिन्ता न करें, सब ठीक हो जाएगा, ऐसी सुन्दर लड़की है आपकी, गुण–रूप देखकर अपनी सब माँगे भूल जाऐंगे।" अब कभी–कभी सोचती हूँ, नारी होकर भी मैं उन्हें एक नारी के प्रति हो रहे अन्याय का विरोध करने को क्यों नहीं उकसा पाई। क्यों नहीं कह सकी कि जो सगाई में ऐसे नीच लोलुप स्वभाव का परिचय दे गया, उसे क्यों अपनी कन्या सौंप रहे हैं आप? अभी क्या बिगड़ा है, तोड़ दिजिए यह सगाई।" विवाह हुआ और बड़ी धूमधाम से हुआ.... "विवाह के चार ही महीने बाद गैस पर खाना बनाते हुए, आँचल में आग लगी–मिनटों में ही झुलस गई, दूसरे ही दिन खतम हो गई।" किन्तु वास्तविकता ये थी कि जली नहीं, जला दी गई थी। कहानी में त्रासदीपूर्ण ढंग से एक मासूम की मृत्यु का कारण बना समाज में फैला दहेज। खबर पाते ही उसकी माँ ने बेटी से पूछा, 'कैसे हुआ यह?' बोली–'अम्मा हुआ नहीं, किया गया।' बस, आँखे पलट दी। "वहाँ उस बयान का कोई साक्षी नहीं था, न नर्स, न डॉक्टर–हाँ, एक साक्षी थी, स्वयं सगी बहन, वह मुकर गयी। "मैंने चीख–चीखकर कहा, 'मेरी बेटी जली नहीं, उसे जलाया गया है, मुझसे स्वयं कह रही है।' 'पर मेरी ही सगी बहन ने मेरा मुँह दाब दिया, 'क्या कह रही हो जीजी! दिव्या खाना बनाने में जली है, उसे किसी ने नहीं जलाया।' "तू झूठी है, तेरे पति भी पुलिस के अफसर हैं और दिव्या का जेठ भी, तुम्हारी बिरादरी हमेशा अपने पेशेवर को ही बचाती है। तूने ही यह रिश्ता इन कसाईयों से पक्का

Scanned with CamScanner

किया ... । हाँ मुझसे नाराज होकर घर चली गई–तब से दर–दर भटक रही हूँ। कही तो न्याय की भीख मिलेगी। हत्यारा अभी भी मूँछों पर ताव देता घूम रहा है, सुना है दूसरी जगह रिश्ते की बात चल रही है।'' इस कहानी में कितनी मार्मिकता से शिवानी जी ने दहेज के दुष्प्रभावों को दिखाया है। शिवानी जी ने दहेज जैसी गंभीर समस्या को अपने 'कालिन्दी', 'चल खुसरो घर आपने', 'तिलपात्र' आदि उपन्यासों में भी उठाया है।

दहेज समस्या के अतिरिक्त शिवानी जी ने वेश्या समस्या पर बहुत कुछ लिखा है। किन मजबूरियों से स्त्रियाँ या लड़कियाँ वेश्या बनती है, उनके प्रति समाज का दृष्टिकोण, समाज में उनका स्थान आदि का वर्णन शिवानी जी ने किया है। वेश्या जीवन का चित्रण और उनके प्रति संवेदना का चित्रण प्रेमचन्द युग से आज तक होता आया है। शिवानी जी भी इससे अछूती नहीं रहीं। शिवानी का नाम उन सर्जकों में विशेष रूप से उल्लेखनीय है जिन्होंने वेश्या–जीवन जीने के वाली स्त्री के उद्धार के लिए अपने कथा–साहित्य के माध्यम से सराहनीय कार्य किया है। शिवानी जी मानती है कि नारी का यह रूप मूलतः आर्थिक विवशता का परिणाम होता है। यह विवशता कहीं जन्म से ही उसे वेश्या–कुल से जोड़ देती है। शिवानी के कथा–साहित्य में ऐसी स्त्रियाँ दो वर्गों में विभाजित की जा सकती है। प्रथम वर्ग में उन नारियों का गर्हित रूप है, जो साधारण समाज का कंलक समझी जाती है। पुरुष की वासनापूर्ति से अपने आर्थिक अभाव की पूर्ति करना ही जिनका प्रमुख उद्देश्य रहता है। अपने भविष्य के असुरक्षा के भाव के कारण अधिकाधिक धनार्जन को अपना लक्ष्य बनाती है। दूसरे वर्ग में 'देवियाँ' आती है, जो अपने रूप, गुण और शील में किसी ललना से कम नहीं। इनका स्नेह, त्याग अभिजात्यवर्गीय नारी के समकक्ष रहकर भी इनकी नियति वेश्या होकर ही रहने की है। 'कृष्णकली' की पन्ना, 'करिये छमा' हीरावती ऐसी ही त्यागमयी श्रेष्ठ नारियाँ है। शिवानी जी का मानना था कि वेश्या घृणा के योग्य नहीं है, वह भी मानवी है, उनमें भी स्त्रीत्व की भावना है तथा वह प्रेम और विश्वास की भावना पाकर अन्य नारियों की भाँति जीवन व्यतीत कर सकती है। शिवानी जी ने अपने उपन्यास और कहानियों दोनों के माध्यम से वेश्याओं के जीवन की विडम्बनाओं, उनकी परिस्थिति की विवशताओं तथा उनके मन की पवित्रताओं पर विस्तृत प्रकाश डाला है। वेश्या जीवन की तरह वैधव्य जीवन, नारी जीवन की बेहद कारुणिक स्थिति होती है। नारी जब विधवा बन जाती है तो उसका जीवन समाज में नर्क से भी बदतर बन जाता है। वह समाज–परिवार के अनेक नए नियमों से जकड़ दी जाती है। वह न अच्छे वस्त्र धारण कर सकती है, न हँस–बोलकर जीवन बीता सकती है, न किसी पर्व–त्योहार, शादी–विवाह में भाग ले सकती है। समाज द्वारा उपेक्षित जीवन स्वयं उसके लिए भी भार–स्वरूप बन जाता है। सदियों से ऐसी भाग्यहीन विधवाएँ जीवन जीती रही है। शिवानी ने अपनी कहानियों–उपन्यासों में विधवाओं के अन्तर्मन में उठने वाली इच्छाओं, भावों का चित्रण अनेक सन्दर्भों के अन्तर्गत करती है। वे मानती है विधवा होना कोई पाप नहीं है कि जिसका भार एक स्त्री हमेशा अपने साथ ढोए। शिवानी ने अपने ढंग से समाज के इस दूषण को मिटाने और विधवाओं को समाज में सम्मानपूर्वक जीवन व्यतीत करने के लिए प्रयत्न किया है। शिवानी अपनी कथाओं में विधवाओं की करूणता का चित्रण तो करती है परन्तु विधवाओं को विवश, परवश या शोषण की शिकार न बना उन्हें शिक्षित कर, आत्मनिर्भर बनाती है ताकि वो पूरे मान–सम्मान के साथ समाज में जीने के लिए तैयार हो। पुनर्विवाह की सामाजिक स्वीकृति की अपेक्षा विधवाओं को शिक्षित और आत्मनिर्भर बनाकर गौरवपूर्ण जीवन के लिए प्रेरित करना श्रेयस्कर है। यह कार्य शिवानी जी पूरे आत्मबल से करने का प्रयत्न करती है।

शिवानी जी सामाजिक समस्या से इतर धार्मिक समस्या को भी पूरी गहराई और मार्मिकता से अपने कथा–संसार में चित्रित करती है। शिवानी जी धर्म का आडम्बर लेकर भोली–भाली जनता को बेवकूफ बनाते अघोरी साधक, धार्मिक संतों, नंगा बाबाओं आदि का वास्तविक रूप सामने रखा है। शिवानी जी की 'निर्वाण' कहानी धार्मिक आडम्बर और धर्म के नाम पर लोगों के जीवन को नष्ट करने वाले एक ऐसे ही चमत्कारी बाबा का चित्रण है। कहानी की पात्र मन्नू यानि मनोरमा चोपड़ा बहुत ही धार्मिक स्वभाव की महिला है और उसे अपने चमत्कारी बाबा जो उसके गुरु भी है, उन पर अटूट विश्वास है। एक दिन मन्नू लेखिका को गुरु के लिए घर पर आयोजित धार्मिक आयोजन पर आमंत्रित करती है। लेखिका मन्नू के घर पर पहुँचती है। तब उसके घर

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

कुछ इस तरह वर्णन करती है, बरसाती से लेकर बाहर तक रंग–बिरंगी कारों की कतारें देखकर ठिठकर खड़ी रह गयी। पहले मैं समझ नहीं पाई, पर कमरे में पैर रखते ही सब स्पष्ट हो गया। जहाँ दीवान, सोफा, रेशमी गदिदयों, रा सिल्क के पर्दों के बीच अपूर्व नग्न मूर्तियों का जमघट रहता था वहाँ सबकुछ तिरोहित हो, फर्श पर दूधियाँ चाँदनी बिछी थी। एक ओर था छोटा–सा कुशासन और बीच में धरी उसके गुरुदेव की बड़ी–सी तस्वीर के सामने अगरबत्तियों के गुच्छे का गुच्छा जलता पूरे कमरे को अपनी लच्छेदार धूमरेखा से सुवासित कर रहा था। कमरे में तिल धरने की भी जगह नहीं थी। एक–से–एक समृद्ध अतिथि, सहमी मुद्रा में नतमस्तक बैठे, गुरुदेव की प्रतीक्षा कर रहे थे। सहसा गुरु का पदार्पण हुआ। स्कंध स्पर्श करते रेशमी घुँघराले बाल, स्थूलकाय प्रसन्नवदन उस दिव्यपुरुष को देखते ही जैसे सबको एकसाथ बिजली का–सा झटका लगा और सब खड़े हो गए।. .... कमरे की भीड़ को आतुरता की लहर चंचल कर गई। आधुनिक जीवन के अनेक संशयों से क्षुब्ध कितने ही व्याकुल चित्त, एकसाथ अनेक प्रश्न को लालायित हो और निकट खिसक आए।'' कहानी के अनन्तर लेखिका महसूस करती है कि मन्नू बाबा की अंधश्रद्धा के चलते धीरे–धीरे परिवार से कटती चली गई। आए दिन उनके साथ धार्मिक गोष्ठियों में भाग लेने, देश–विदेश की खाक छानती मन्नू पति, पुत्र, पुत्री सबको भुला बैठी थी। ओर एक दिन मन्नू परिवार का त्यागकर, सब–कुछ छोड़ उस बाबा के साथ चली जाती है। महीनों उसकी कोई खबर नहीं मिलती। फिर एक दिन लेखिका ने देखा 'एकसाथ ही देश के प्रमुख समाचार–पत्रों ने उसके गुरुदेव की धज्जियाँ उड़ाकर रख दीं। उसकी तस्करी की कहानियाँ, भोली–भाली युवतियों को ही नहीं, अनेक सुशिक्षिता आधुनिकओं को भी अपने सम्मोहन–पाश में बाँधने का रंगीन विवरण, कई विदेशी चेले–चपाटों की लूटपाट, उन्हें पथ का भिखारी बना देने का लेखा पढ़कर भी मुझे सबकुछ अधूरा–सा ही लगा था, क्योंकि उनकी जिस शिष्या ने, उन्हें दीक्षा की सबसे गहरी दक्षिणा दी थी, उस अभागिनी का नाम मुझे कहीं ढूँढने पर भी नहीं मिला।' और इसी सस्पेंस के साथ कहानी का अंत हो जाता है। प्रस्तुत कहानी संकेत रूप से धर्म के नाम पर खिलवाड़ करने वाले बाबाओं और उन पर अगाध अंधश्रद्धा से अपने जीवन को नष्ट करने वाली युवतियों पर तीखा प्रहार करती है। शिवानी जी ने कहानियों के अलावा 'सुरंगमा', 'चौदहे फेरे' आदि उपन्यासों में भी पाखण्डी साधु–सन्तों की प्रवृत्तियों को दिखाकर उन पर चोट तो करती ही है, साथ ही वे धार्मिक आडम्बर, अन्धविश्वास, ईश्वर को दी जाने वाली बलि, जादू–टोना, चमत्कार, निर्वाण प्राप्ति हेतु की जाने वाली श्मशान पूजा एवं साधना, धार्मिक छूआछूत आदि गंभीर समस्याओं को भी दिखाती है।

सहायक ग्रंथ सूची

1. कुषवाहा अमित कुमार, हिन्दी साहित्य में स्त्री अस्मिता–नये प्रश्न नई चुनौतियां, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी, पृ. 22
2. आइसेंक एच.जे., द एनसाइक्लोपीडिया ऑफ फिलोसॉफी, पृ. 385
3. सोलंकी डॉ. गीता, नारी चेतना और कृष्णा सोबती के उपन्यास, पृ. 14
4. सोबती कृष्णा, नारी मुक्ति और नारी मुक्ति आंदोलन, पृ. 29
5. कुमार जैनेन्द्र, नारी, पृ. 44
6. अग्रवाल साधना, वर्तमान हिन्दी महिला कथा लेखन और दाम्पत्य जीवन, भूमिका
7. चतुर्वेदी जगदीश्वर, स्त्रीवादी साहित्य विमर्श, पृ. 07
8. नागर सूर्यकांत, नारी अस्मिता सुलगते सवाल, पृ. 39
9. पंडित सुरेश, मानव अस्तित्व के लिए लड़ती महिलाएं, पृ. 89

Scanned with CamScanner

Since March 2002
An International, Registered & Referred Monthly Journal : Research Link - 149, Vol - XV (6), August - 2016, Page No. 65-67
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782
Hindi Literature

हिन्दी कहानियों में स्त्री-जीवन की अभिव्यक्ति : एक अध्ययन

प्रस्तुत शोधपत्र हिन्दी कहानियों में स्त्री-जीवन को केन्द्र में रखकर जो कुछ भी लिखा गया है, उस पर केन्द्रित है। आधुनिक काल से लेकर समकालीन दौर में भी हिन्दी कहानियों में स्त्री-जीवन की सशक्त अभिव्यक्ति उसकी सामाजिक स्थितियों के चित्रण की अभिव्यक्ति कथाकार करते रहे हैं। आज के बदलते दौर में उसके संघर्ष, उसके संकट, जितनी चुनौतियाँ आई हैं, वे इसके पूर्व उतनी नहीं थी। कहानियों में रचनाकारों ने आज के दौर की स्त्री के संघर्ष, साहस, चुनौतियों का मुकाबला करने का संदेश दिया है। मन्नू भंडारी ने 'यही सच है' कहानी में स्त्री के स्वतंत्र व्यक्तित्व की खोज की है। उसके पूर्ण व्यक्तित्व की खोज में मानसिक संघर्ष को भी बारीकी के साथ लिखा है। यह सच है कि एक अनिश्चित और ना समाप्त होने वाली लड़ाई को वह पूरी ताकत के साथ लड़ती दिखाई देती है।

निधि कौशिक

जब से इस संसार में मानव जाति का अभ्युदय हुआ है, तब से लेकर आज तक मानव समाज में स्त्री की अभिव्यक्ति अलग–अलग रूपों में होती चली आ रही है। वैसे देखा जाए तो इसके कई कारण नजर आते हैं। स्त्री देश, काल और परिस्थिति के अनुसार निर्देशित और पालित की जाती रही है। यही कारण है कि अलग क्षण विशेष, काल, काल चक्र और समय के अनंत समुद्र में गोता खाती स्त्री कभी परंपराओं के बंधन में जकड़ी, कभी पारिवारिक दखलंदाजी का शिकार, कभी देश रक्षा हेतु प्राण–प्रण से जीवटता का परिचय देती, तो कभी अध्यात्म और साहित्य में अपनी भूमिका दर्ज कराती स्त्री का अभिव्यक्ति भी समयानुसार अलग–अलग रहा है। आदिकाल से नारी के प्रति मनुष्य की भावना सदा से एक सी नहीं रही। युग की परिस्थितियों और काल के घटनाचक्र सदा उसे एक नया मोड़ देते रहते हैं। आधुनिक काल तक आते–आते उसने सहस्त्रों लाखों इतिहास के पृष्ठों पर नारी की जीवन गाथा की करूणामयी कहानी को अंकित कर मनुष्य को बार–बार दयनीय, शोचनीय एवं कारूणिक स्थिति को देखने के लिए प्रेरित एवं विवश किया जो युग युगान्तर से निरीह, असहाय, अबला तथा दासी मात्र समझी जाती रही। आधुनिक काल के पूर्व अंध–विश्वासों, कुरूरीतियों, कुप्रथाओं एवं रूढ़िग्रस्त भारतीय समाज में उसकी स्थिति अत्यंत शोचनीय रही है। कालान्तर में हमारे समाज सुधारकों, राजनेताओं एवं साहित्यकारों ने नारी उत्थान एवं नारी जागृति का कार्य तेजी से किया और उनके निरन्तर प्रयास के फलस्वरूप समाज में जागृति आई और नारी के प्रति उनका दृष्टिकोण सुधारात्मक होता गया। समय के अनुसार परिस्थितियाँ बदली और सोच भी। धीरे–धीरे नारी जाति के प्रति पुरूष प्रधान समाज का नजरिया भी बदलता रहा। राष्ट्रीय एवं सामाजिक आंदोलनों में भारतीय नारी के व्यक्तित्व में एक नया परिवर्तन देखने को मिला और नारी के प्रति समानाधिकार की भावना बढ़ती गई। आज आलम यह है कि हर क्षेत्र में नारी जाति को विशेष आरक्षण और दर्जा हासिल है। खुशी की बात यह है कि यह आरक्षण और दर्जा देने वाला कोई और नहीं, बरसों से नारी जाति को शोषण करने वाला पुरूष प्रधान समाज ही है।

नारी जीवन की दिन–प्रतिदिन घटित समस्याएँ पुरूष की अपेक्षा महिला साहित्यकार जितनी सूक्ष्मता एवं कुशलता के साथ रख सकती है, उतना पुरूष साहित्यकार नहीं। प्रमुख महिला लेखिकाओं और उनकी नारी विषयक धारणा के अंतर्गत राजेन्द्र बाला घोष का अपना विशिष्ट स्थान है। इनकी कहानियों में नारी जीवन की समस्या को दर्शाया गया है कि गाँव की लज्जाशील बहुओं के मेले में जाने से क्या दुर्गति होती है। "दुलाईवाली" कहानी में शिष्ट हास्य का आश्रय लेकर समाज सुधार का संदेश दिया गया है। लेखिका की अधिकांश कहानियाँ नारी जीवन की गाथा को स्पष्ट करती है।

हिन्दी की प्रमुख महिला कहानीकारों में सुभद्रा कुमारी चौहान के तीन कहानी संकलन "बिखरे मोती", उन्मादिनी, सीधे सादे चित्र, जिनमें नारी जीवन के विविध पक्षों को उद्घाटित किया गया है। वे नारी के स्वतंत्र व्यक्तित्व की पक्षधर है। उनका कहना है कि नारी को अपनी इच्छाएँ और उनकी पूर्ति का उन्हें पूरा अधिकार है। उन्होंने उन्मादिनी कहानी संकलन में कहा है कि "स्त्री के हृदय को पहचानो और उसको चारों ओर फैलने और विकसित होने का अवसर दो, ये न भूल जाओ कि उसका अपना भी व्यक्तित्व है। उन्होंने परिवार में नारी की रात–दिन की विवशताओं, समस्याओं के विभिन्न पहलुओं का अत्यंत भावुक, करूण, हृदय द्रावक चित्रण किया है।"(1)

सुभद्राजी ने नारी जाति का समर्थन करते हुए सामाजिक आन्दोलनों का महत्वपूर्ण समर्थन किया है। महिला कहानीकारों में होमवती देवी के चार कहानी संग्रह – धरोहर, निःसर्ग, स्वप्न भंग, अपना घर प्राप्त होते हैं। जिनमें नारी जीवन की अनेक समस्याओं

शोध छात्रा (हिन्दी विभाग), पं.रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

और नारी विषयक विचार धारा को व्यक्त किया गया है। उनकी कहानियों का उद्देश्य पारिवारिक, सामाजिक परिवेश में मध्यम एवं निम्न वर्ग की नारी की दयनीय स्थिति का वर्णन है। कई कहानियों में तो शोषित नारी का दारुण चित्रण वास्तव में सोचने को मजबूर कर देता है।

हिन्दी की प्रमुख महिला कथाकारों में महादेवी वर्मा का नाम एक कवियित्री एवं गद्य निबंधकारों के रूप में प्रसिद्ध रहा है। आपने संस्मरण रेखाचित्र और कहानियों का भी सृजन किया है। "श्रृंखला की कड़ियों" में आपने नारी जाति पर दिन-रात होने वाले अन्यायों, अत्याचारों का जो मार्मिक एवं कारूणिक वर्णन किया है। वह नारी जीवन विषयक धारणाओं को व्यक्त करता है। नारी जीवन की व्यथा महादेवी वर्मा द्वारा एक निबंधकार के रूप में अधिक सशक्त रूप से है। भारतीय समाज में नारी की स्थिति दयनीय और विचारणीय रही है। महादेवी वर्मा की कहानियों में नारी जाति की दिन-प्रतिदिन की समस्याओं और उससे जूझती अबला का चरित्र चित्रण वास्तविकता के नजदीक जान पड़ता है।

उनके शब्दों में, "भारतीय नारी आज कैसी अपमानित, प्रताड़ित, अधिकारहीन, व्यक्तित्वहीन प्राणी है, इसके समान अधिक दयनीय प्राणी संसार मे कठिनाई से मिलेगा। ....शायद हम सभी लोगों की घर की दीवारें पर नारी के किसी न किसी रूप में निर्मम हत्या उलझे हुए खून के छीटे मिलेंगे।"(2)

महादेवी जी ने नारी की परवशता की समस्या पर केवल कवि की करूणा दृष्टि डाली है। ऐसी बात नही है उन्होंने एक गंभीर, समाजशास्त्री के रूप में इस समस्या पर चितंन किया और उसके मूल में नारियों, आर्थिक और सामाजिक बंधन को प्रमुख माना है। जहां महादेवी वर्मा ने स्त्री जाति की समस्याओं को कहानियों के माध्यम से उठाया है, वहीं उन्हीं कहानियों के माध्यम से समस्या का समाधान प्रस्तुत करने की भरसक कोशिश भी की है।

"भारतीय संस्कृति के प्राचीन रामायण और महाभारत में अंकित नारियाँ द्रोपदी, दमयंती, कुंती, सावित्री, सीता, कैकेयी अपनी अवस्था एवं युग की कहानी स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त है। इनका अस्तित्व में विलीन नारीत्व नहीं, भावनाओं, विचारों, तर्को तथा अन्य प्रत्येक क्षेत्र में शक्तिशाली स्त्रीत्व है। मातृत्व, पत्नी एवं प्रेयसी रूप उसके व्यक्तित्व में साकार है। स्त्रियाँ पुरूषों को कर्म तथा वीरता का उद्देश्य देती है। पति को यश तथा शौर्य के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करती है। अकर्मण्यसता तथा दुराचार पर उन्हें प्रताड़ित तथा लांछित करती है। स्त्री धर्म, अर्थ तथा मोक्ष की मूल है, सबसे बड़ी मित्र है। आनंद में मित्र है, उत्सव में पितावत है, रूग्णावस्था में मातृवम है, मृत्यु के पश्चात् भी पति-पत्नी मिलते हैं, यह प्राचीनतम् नारी का आदर्श था।"(3)

संस्कृति तथा सभ्यता के इस युग से आधुनिकता में मानव सृष्टि के विस्तार के साथ नारी का परिवर्तित रूप सामने आने लगा। और मध्यकाल आते-आते नारी की स्थिति अत्यंत दयनीय और कारूणिक हो गई। परन्तु आधुनिक काल आते-आते भारतीय समाज़ के दृष्टिकोण में परिवर्तन आया और स्त्रियों की दशा सुधारने के लिए अनेक प्रयत्न किए जाने लगे साथ ही स्त्रियों में सामाजिक चेतना ने उन्हें नए दृष्टिकोण से सोचने समझने की सूझ प्रदान की तथा वे अपने अधिकारों के लिए संघर्षरत होती दिखाई देती है। स्वतंत्रता के बाद स्त्री जीवन में पर्याप्त परिवर्तन आया। " एक ओर जहाँ परिवार का परंपरागत स्वरूप टूटा, वहीं दूसरी ओर नारी स्वतंत्रता के कारण नारियों के स्वरूप में परिवर्तन आया है। उन्होंने जीवन और चिंतन के स्तर पर पुरुषों के समान ही स्वयं को प्रस्तुत करने की कोशिश की। स्वतंत्रोत्तर नारी के इस रूप को लेकर महिला कहानीकारों ने अनेक कहानियाँ लिखी, जिनमें पारिवारिक विघटन से लेकर नारी के इस नये अर्द्ध-पोषित स्वरूप तक का चित्रण किया गया है।"(4)

हमारी हिन्दी महिला कथाकारों ने अपनी कहानियों में नारी के प्रति दृष्टिकोण को अपनी कहानियों में विभिन्न दृष्टिकोण से व्यक्त किया है। "यही सच है" कहानी में "मन्नू भंडारी" नारी के स्वतंत्र व्यक्तित्व का चित्रण करती हुई कहती है –" अपने पूर्ण व्यक्तित्व के खोज में विभिन्न बिन्दुओं पर आकर रुक जाती जहाँ उसके लिए यह फैसला करना कठिन हो जाता है कि उसका मार्ग किस दिशा की ओर जाती है..........वह अनिश्चितता की यातना को भोगती हुई उसी निर्णय पर पहुँच जाती है, जो निश्चय उसका अपना होता है, उसकी अन्तरात्मा का होता है।"(5)

हिन्दी की अनेक महिला कहानीकार स्वस्थ दृष्टिकोण की समर्थक रही है, जिसमें मन्नू भंडारी, शिवानी, शिवरानी, होमवती देवी, कृष्णा सोवती, मृदुला मर्ग, अधला शर्मा, उषा प्रियम्वदा, मालती जोशी, महरून्निसा परवेज, मृणाल पाण्डे आदि हैं।

नारी होने के नाते इन महिला कहानीकारों ने नारी-जीवन की विभिन्न समस्याओं को जहाँ चित्रिन किया किया है। वही उसकी विशिष्टताओं और गुणों का भी उल्लेख किया है। इनके नारी पात्र अपने प्रति किए गए अन्यायों का सशक्त विरोध करते हैं और अपने अधिकारों के लिए संघर्षरत होते दिखाई देते हैं। ये स्त्री पात्र भारतीय संस्कृति के अनुरूप क्षमा संकोच, पतिपरायणता आदि गुणों का त्याग नहीं करती वरन् अपने गौरव और महत्व के अनुरुप अपने महत्व को प्रतिपादित करती हैं।

भारतीय समाज में नारी की स्थिति सदा एक सी नहीं रही है। स्वतंत्रता पश्चात् उसकी स्थिति में परिवर्तन आया है। समाज को सामाजिक अधिकार देना चाहता है। परन्तु आज नारी को वे सारे अधिकार स्वतः ही प्राप्त हो रहे हैं और वह अनेक क्षेत्रों में बढ़-चढ़कर भाग ले रही है। सच बात तो यह है कि नारी जो परम्परागत मान्यताओं से अब तक बंधन में जकड़ी रही उसने इस बंधनों के प्रति विद्रोह कर दिया। जिससे पुराने आदर्श और परम्पराएँ ढहने लगी। दूसरी ओर पुरानी मान्यताओं और आदर्शों को मानने को बाध्य रही है। महिला कहानीकारों ने अपने लेखन में नारी स्वतंत्रता, नारी शिक्षा और नारी अधिकारों की आवाज बुलन्द की है। उषा प्रियम्वदा जी ने अपनी अनेक कहानियों में नारी के प्रति विरोधी दृष्टिकोण का विरोध पारिवारिक जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा इस प्रश्न को उठाया गया है। पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित भारतीय नारी के आचार-विचार में परिवर्तन आना स्वाभाविक है। यह विरोधी दृष्टिकोण कहाँ तक औचित्यपूर्ण है, यह आधुनिकता का परिचायक ही है न कि पुरानी मान्यताओं को स्वीकार करने का। "कमला चौधरानी" ने भी नारी जीवन की अनेक समस्याओं को हमारे सामने प्रस्तुत किया और उनको अपने अधिकार प्राप्त करने और जीवन क्षेत्र में आगे बढ़ने की तरफदारी की है। नारी स्वतंत्र का समर्थन किया है और उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व की हितायत की है।

Scanned with CamScanner

शिवानी की कहानी मात्र की उपज नहीं है, उनमें सत्यता एवं वास्तविकता का चित्रण है। जिसमें उन्होंने कल्पना के रंग भर है। इससे उनमें रोचकता आ गई है। लेखिका ने अपने भोगे हुए यथार्थ को, झेले हुए सुख–दुख को अपनी कहानियों के पात्रों को लेकर अपनी कहानियों का ताना–बाना बुना है। उनकी कहानी में नारी जीवन से संबंधित अनेक समस्याएँ उभर कर सामने आई है। शिवानी की कहानी में नारी अपने बचपन के संस्कारों को किसी भी परिस्थिति में भूल नहीं सकती है और भूलने पर, उसके लिए प्रायश्चित भी करती है। इसी मनो भावना को लेकर शिवानी ने दादी कहानी लिखी है। शिवानी की मर्मस्पर्शी लेखनी से उकेरा गया आत्मीय कहानियों का संकलन है 'चिर स्वयंवश' इसकी सभी कहानियाँ नारी मन की गहरी पड़ताल करती है। उनके सुख–दुख, उनके रिश्ते और उनके आपसी तनाव को अपने में समेटे हुए है। नारी सदैव से ही अपने अधिकारों से वंचित रही है। उसके कर्त्तव्य तो याद दिला दिए जाते हैं, लेकिन अधिकारी नहीं दिया जाता कि वह किसी व्यक्ति का स्वेच्छा से वरण करें और जीवन साथी बनायें।

संदर्भ :

(1) चौहान, सुभद्रा कुमारी : उन्मादिनी, पृ. 11.

(2) वर्मा, महादेवी : श्रृंखला की कड़िया, पृ. 101.

(3) सिन्हा, डॉ. सावित्री : मध्यकालीन हिन्दी कहानियाँ, पृ. 55.

(4) गर्ग : कहानी की संवेदनशीलता – सिद्धांत और प्रयोग, पृ. 510.

(5) भंडारी, मन्नू : यही सच है, पृ. 34.

❀❀

Scanned with CamScanner

International Journal of Reviews and Research in Social Sciences. 7(2): April- June, 2019

ISSN 2347-5145 (Print)
2454-2687 (Online)

Vol. 07 | Issue-02|
April- June 2019

Available online at
www.anvpublication.org

International Journal of
Reviews and Research in Social Sciences

RESEARCH ARTICLE

नगर पालिक निगम, दुर्ग के राजस्व वसूली का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ एच.एस. भाटिया[1], डॉ एस.एन. झा[2], अंकिता नामदेव[3]

[1]सहायक प्राध्यापक, शा. दिग्विजय महाविद्यालय, राजनांदगांव
[2]प्राध्यापक, शा. विश्वनाथ यादव तामस्कर महाविद्यालय, दुर्ग
[3]शोधार्थी, शा. विश्वनाथ यादव तामस्कर महाविद्यालय, दुर्ग

*Corresponding Author E-mail:

ABSTRACT:
प्रत्येक संस्था को अपने आर्थिक क्रियाओं के संचालन व विस्तार के लिये वित्त की आवश्यकता होती है। स्थानीय संस्थाओं को भी अपने सभी कार्यों के निर्वहन व संचालन हेतु वित्त/धन की आवश्यकता पड़ती है। ये वित्त ही राजस्व/लोक वित्त कहलाते हैं। राजस्व के द्वारा ही स्थानीय संस्थायें अपने कार्यों का निर्वहन कर पाती है। स्थानीय निकाय अपने राजस्व की प्राप्ति करों से अकरगत स्त्रोतों से व राज्य सरकार द्वारा प्राप्त अनुदान से करती है। निगम प्रशासन अगर अपने करगत व अकरगत राजस्व की वसूली अधिक से अधिक करने लगे तो वह अपने नागरिकों को मूलभूत सुविधा आसानी से उपलब्ध करा सकेगा। इस शोध अध्ययन में नगर पालिक निगम, दुर्ग के राजस्व वसूली के अध्ययन हेतु प्राथमिक व द्वितीयक समंकों का संकलन किया गया है। शोध अध्ययन का मुख्य उद्देश्य निकाय की राजस्व वसूली को जानना है। अध्ययन में यह पाया गया कि, निकाय की राजस्व वसूली शत् प्रतिशत तो नहीं परन्तु संतोषप्रद कही जा सकती है। किसी वर्ष वसूली अच्छी है तो किसी वर्ष वसूली का आकड़ा बहुत ही कम है। नगर पालिक निगम, दुर्ग अगर सम्पत्तिकर सहित सम्पूर्ण राजस्व वसूली पर ध्यान दे तो निगम अपने राजस्व वसूली के द्वारा ही आत्म निर्भर बन अपने नगर का उत्तरोत्तर विकास कर सकेगा।

KEYWORDS: राजस्व, सम्पत्तिकर, राजस्व वसूली, वित्त, नगरीय प्रशासन।

भूमिका :

स्थानीय निकायों के संबंध में कहा जाता है कि ये पालने से लेकर श्मशान तक के कार्यों का निर्वहन करती है अर्थात् स्थानीय निकाय व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु तक के कार्यों को करती है। मनुश्य नगर या गांव में जन्म लेता है। वहीं पलता है, बड़ा होता है, शिक्षा प्राप्त करता है और वृद्ध होकर उसकी मृत्यु हो जाती है। इस प्रकार जन्म लेने के पश्चात् बच्चों के लिये नर्सरी स्कूलों, प्राथमिक माध्यमिक शिक्षा युवाओं के लिये सांस्कृतिक गतिविधियां सबके लिये

Received on 23.04.2019 Modified on 11.05.2019
Accepted on 27.05.2019 © A&V Publications All right reserved
Int. J. Rev. and Res. Social Sci. 2019; 7(2):531-536.

Scanned with CamScanner

चिकित्सा, व्यापार, वाणिज्य, आवागमन, विद्युत, प्रकाश, स्वच्छता, जल की आवश्यकताओं की पूर्ति करना तथा मृत्यु होने पर श्मशान की व्यवस्था करना ये स्थानीय संस्थाओं के कार्य है। इस प्रकार संस्थाएं नागरिकों को मूलभूत सुविधा उपलब्ध कराने हेतु कार्य करती है। स्थानीय निकायों के कार्यों को नगरीय निकायों की विद्यमान क्षमता एवं वित्तीय संसाधनों को देखते हुये दो भागों में बांटा गया है :-

(1) अनिवार्य कार्य (2) ऐच्छिक कार्य

अनिवार्य कार्य का प्रारूप सभी राज्यों में प्रायः समान ही है परन्तु ऐच्छिक कार्यों के संबंध में भी सभी संविधियों में एक सर्वव्यापी कार्य का उल्लेख होता है। ''कोई अन्य कार्य जिसमें सार्वजनिक सुरक्षा, स्वास्थ्य सुविधा तथा सामान्य कल्याण के परिवर्धन की सम्भावना हो।''1(माहेश्वरी श्रीराम, भारत में स्थानीय शासन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा पृष्ठ क. 272)

दुर्ग नगर पालिक निगम भी अपने कर्तव्यों का निर्वहन करते हुये नगर के विकास हेतु अनिवार्य व ऐच्छिक दोनों तरह के कार्यों को प्राथमिकता के स्तर पर उचित समझते हुये करती है। इन कार्यों को करने हेतु नगर प्रशासन को वित्त की आवश्यकता होती है, चूंकि निगम के पास मूलभूत सुविधा के अलावा और भी बहुत से कार्य हैं करने के लिये, परन्तु वित्तीय संसाधन सीमित ही है। अतः आय–व्यय में उचित सामन्जस्य बनाना किसी भी निकाय के लिये अनिवार्य सा बन जाता है।

प्रस्तावना :

वर्तमान समय में नगरीय प्रशासन का कार्य कठीन हो गया है। नगरीकरण प्रकिया में वृद्धि, नगरीय समस्याओं में वृद्धि तथा कार्यों में वृद्धि के कारण नगरीय प्रशासन कार्य चुनौतीपूर्ण हो गया है। इसका विकास क्षेत्र अति व्यापक हो गया है। इसमें नगरीकरण, नगरीय विकास, नगरीय वृद्धि, नगरीय पुर्नविकास, नगरीय आधारित संरचना नगरीय मूलभूत सुविधा की व्यवस्था, नगरीय नियोजन एवं प्रबंध से संबंधित प्रत्येक विचारणीय विषयों का समावेश है, चूंकि स्थानीय संस्थाएं अपने क्षेत्र के नागरिकों को यथासंभव सुविधाएं प्रदान करती है। ये केन्द्र और राज्य सरकार द्वारा संचालित महत्वपूर्ण योजनाओं का सफल संचालन करती है।

अतः नगरीय निकायों को अपनी सभी मूलभूत कार्यों को करने के लिये पर्याप्त वित्त की आवश्यकता पड़ती है। वित्त जिसे किसी भी प्रशासन का जीवन रक्त कहा जाता है। इसके बिना कोई भी प्रशासनिक नियोजन या निर्णयों का कियान्वयन करना असंभव सा बन जाता है। इस प्रकार राजस्व/लोकवित्त के द्वारा ही स्थानीय संस्थाएं अपने कार्यों का निर्वहन करती है। राजस्व या लोकवित्त में जनसंख्या के साधनों को सम्मिलित करते हैं। राजस्व सरकार की वित्तीय पहलू के अध्ययन को कहा जाता हैं। यह सार्वजनिक संस्थाओं जैसे सरकार, स्थानीय संस्थाएं एवं जन निगम के वित्त से संबंध रखता है। राजस्व की अवधारणा राज्य और उनसे संबंधित समस्याएं जब सामाजिक कल्याण के लिये धन एकत्रित करती है तथा उसका समुचित उपयोग करती है से संबंधित है।

स्थानीय निकाय नागरिकों के सदैव निकट रहने के कारण इनकी समस्याएं भी अधिक निकट की होती है। अतः इनके द्वारा नागरिकों को अधिकांशतः प्रत्यक्ष सेवाएं प्रदान करना तथा उनकी कार्य क्षमता को बढ़ाने के प्रयास किये जाते हैं।

स्थानीय निकायों की वित्तीय व्यवस्था के मुख्य स्त्रोतों को निम्न प्रकार से बांटा जा सकता है :-
(1) करो से आय (2) गैरकरगत आय (3) राज्य सरकार से प्राप्त अनुदान

(1) करो से आय :-

इस मद में सम्पत्तिकर, भूमि भवन कर, सीमाकर, पथकर सम्पत्ति हस्तांतरण पर कर, जलकर, स्वच्छता कर, प्रकाश कर आदि को शामिल किया जाता है।

(2) गैर करगत कार्य :-

इसमें शिक्षा उपकर, दण्ड, किराया, लायसेंस शुल्क आदि शामिल है।

(3) राज्य सरकार से प्राप्त अनुदान :-

इसमें राज्य सरकार से प्राप्त अनुदान जैसे सीमा क्षतिपूर्ति शुल्क, वित्त आयोग से प्राप्त राशि, विभिन्न योजनाओं हेतु प्राप्त राशि आदि को सम्मिलित करते है।

इस प्रकार स्थानीय निकाय द्वारा लगाए गये करो को दो भागों में प्रत्यक्षकर व अप्रत्यक्ष कर में भी बांटा जा सकता है। प्रत्यक्ष करों के अंतर्गत सम्पत्ति कर,

Scanned with CamScanner

वृत्तियों या पेशो पर कर, मार्ग शुल्क गाड़ियों पर कर, बाजार कर, जलकर जानवरों के कय–विकय पर कर आदि सम्मिलित है। प्रत्यक्ष करों के अंतर्गत चुंगी कर, सीमान्त कर, टर्मिनल कर आदि को रखा जा सकता है। निगम को अपनी राजस्व का 68 प्रतिशत भाग करगत स्त्रोतों से ही प्राप्त है। शेष भाग गैर करगत स्त्रोतों से प्राप्त होता है।

अतः अगर दुर्ग, नगर निगम अपनी राजस्व की वसूली ठीक तरीके से करे तो वह अपनी वित्त संबंधी समस्याओं के लिये राज्य सरकार के समक्ष भीख का कटोरा लेकर खड़ा नहीं होना पड़ेगा। राजस्व की शत्प्रतिशत् वसूली करके निगम अपने सभी नागरिकों की मूलभूत सुविधाएं उपलब्ध कराने में सक्षम हो सकेगी।

उद्देश्य :–

प्रस्तुत शोध अध्ययन निम्न उद्देश्य को ध्यान में रखकर किया गया है :–

1. नगर पालिक निगम, दुर्ग की चालू वर्ष का राजस्व व बकाया राजस्व वसूली का अध्ययन करना।
2. निगम की सम्पत्ति कर वसूली का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि :–

इस शोध अध्ययन में प्राथमिक व द्वितीयक समंको का प्रयोग किया गया है। द्वितीयक संमक आय–व्यय पत्रक नगर पालिक निगम, दुर्ग के द्वारा प्राप्त किया गया है। व द्वितीयक समंको का सांख्यिकी विधि द्वारा विश्लेषण कर आंकड़ों को शुद्ध रूप प्रदान किया गया है, चूंकि शोध अध्ययन का उद्देश्य राजस्व वसूली का अध्ययन करना है। अतः प्रतिशत् विधि का ही प्रयोग कर राजस्व वसूली का शुद्ध प्रतिशत् ज्ञात किया गया है। तथा प्राथमिक समंको के संकलन हेतु साक्षात्कार व अनुसूली विधि का प्रयोग किया गया है। जिसके लिये नगर निगम के राजस्व अधिकारी व विभाग से संबंधित कर्मचारियों का सैम्पलिंग के आधार पर साक्षात्कार किया गया है और अन्त में द्वितीयक समंको के सुक्ष्म विश्लेषण के द्वारा ही शोध अध्ययन उद्देश्यों को प्राप्त करने में जोर दिया गया है।

शोध अध्ययन की परिचयात्मक पृष्ठभूमि :–

शोध अध्ययन का क्षेत्र नगर पालिक निगम, दुर्ग है। यह क्षेत्र छत्तीसगढ़ राज्य के मध्य में स्थित है। दुर्ग शहर में 60 वार्ड है। जहां की जनसंख्या 2,68,806 है। कुल जनसंख्या का 51 प्रतिशत पुरूष तथा 49 प्रतिशत महिला है। शहर की साक्षरता दर 72 प्रतिशत है। जिसमें 65 प्रतिशत महिला साक्षरता तथा पुरूष साक्षरता का प्रतिशत 79 प्रतिशत है। दुर्ग शहर शुरू से ही नगरीय निकायों के नवीनतम कार्यो को लेकर चर्चा में रहा है। 1985–1986 में बने मोती काम्पलेक्स का निर्माण व नगर का बहुमुखी विकास की चर्चा सम्पूर्ण मध्यप्रदेश में होने लगी थी। सफलता का यह परिदृश्य था कि, तत्कालीन मुख्यमंत्री माननीय श्री मोतीलाल वोरा जी मध्यप्रदेश शासन के सचिव द्वारा परिपत्र जारी करके सभी नगरीय निकायों को कहा गया कि वे नगर निगम, दुर्ग के कार्यों का अनुसरण करें। कम दर पर खरीदी, निर्माण कार्यों की गुणवत्ता, बेहतर परिणाम उस समय से नगर निगम की पहचान बन गई थी आज भी नगर पालिक निगम, दुर्ग के कियाकलापों का अन्य नगरीय निकायों द्वारा अनुसरण किया जाता है। नगर पालिक निगम, दुर्ग ने क्लीन सिटी प्रतियोगिता में भी अच्छा स्थान प्रदर्शित किया। इसके जीरो वेस्ट प्रोजेक्ट को ''आर्डर ऑफ मेरिट अवार्ड'' के लिये चुना गया था अवार्ड के लिये चुने जाने के बाद इस प्रोजेक्ट को देश का सबसे अच्छा प्रोजेक्ट मानते हुये स्कॉच संस्था ने दुर्ग, नगर निगम को ''प्लेटिनम अवार्ड'' दिया गया जीरो वेस्ट प्लान की सराहना दिल्ली में भी की गयी।

नगर निगम के दो प्रोजेक्ट को ''स्कॉच आर्डर ऑफ मेरिट अवार्ड'' भी मिला है। ये अवार्ड नई दिल्ली में सितम्बर 2017 49वें स्कॉच अवार्ड में बतख पालन और वाटर हार्वेस्टिंग प्रोजेक्ट के लिये दिया गया। ऐनर्जी सेविंग में भी दुर्ग शहर को प्रदेश में प्रथम पुरस्कार केडा द्वारा प्राप्त हुआ सेमिनार में पूरे देश के 100 से अधिक निकाय शामिल थे। इस प्रकार दुर्ग, नगर निगम सॉलिड वेस्ट मेनेजमेंट में सर्वोकृष्ट कार्य के लिये देश भर में सर्वप्रथम ''प्लेटीनम अवार्ड'' से सम्मानित किया गया।

परिकल्पनाएं :–

1. निगम की राजस्व वसूली की स्थिति संतोषप्रद है।
2. निगम अपनी चल व बकाया सम्पत्ति कर की वसूली मांग के अनुपात में शत् प्रतिशत् नहीं कर पाता।

Scanned with CamScanner

तालिका कमांक 01 निकाय की राजस्व वसूली का विवरण (राशि लाखों में)

वर्ष	चालू वर्ष की मांग			बकाया मांग		
	मांग	वसूली	वसूली का प्रतिशत	मांग	वसूली	वसूली का प्रतिशत
2014–15	1903.67	827.29	74.95	533.59	314.69	58.96
2015–16	1350.94	1110.51	82.20	542.02	300.65	55.46
2016–17	1627.47	1318.37	81.00	552.02	474.6	86.04
2017–18	1639.1	1128.75	68.86	882.34	578.97	65.61
2018–19	1655.32	1335.35	80.67	1310.87	499.10	38.08

स्त्रोत :– कार्यालय राजस्व विभाग, नगर पालिक निगम, दुर्ग

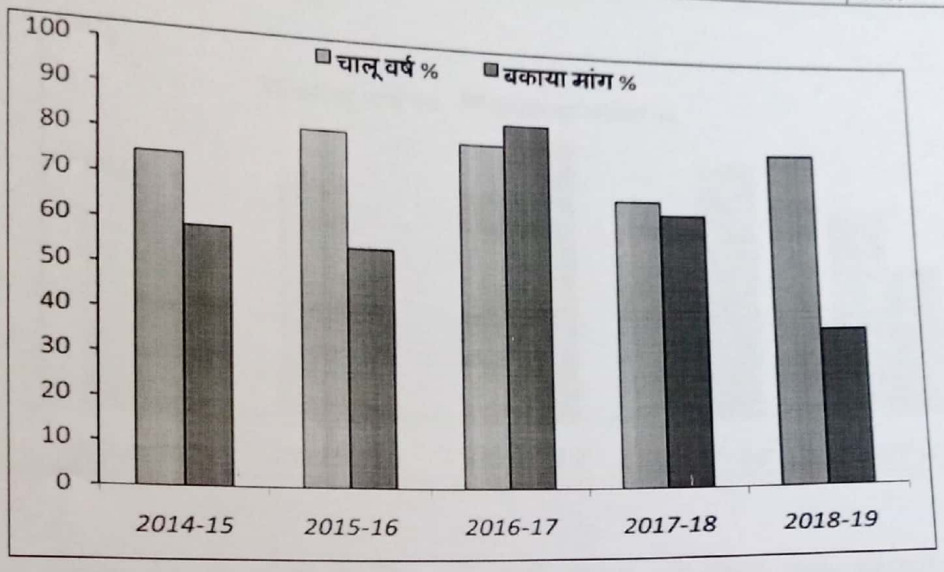

ग्राफ न. 01

उपरोक्त तालिका कमांक 01 में राजस्व वसूली चालू वर्ष की मांग और बकाया वर्ष की मांग को प्रदर्शित किया गया है। राजस्व वसूली अंतर्गत सम्पत्ति कर, समेकित कर (जिसमें सफाई, अग्निशमन, प्रकाश कर को कहा जाता है) जलकर, बाजार कर, दुकान किराया व अन्य कर को शामिल किया जाता है। तालिका से स्पष्ट है कि, वर्ष 2014–15 में कुल चल वर्ष के राजस्व मांग का 74.95 प्रतिशत वसूल किया गया और बकाया मांग का (अर्थात् 2014–15 पूर्व के वर्षों का बकाया राजस्व का) 58.96 प्रतिशत ही वसूल किया गया। इसी प्रकार वर्ष 2015–16 में कुल मांग का 82.20 प्रतिशत वसूली चालू वर्ष की हुई और बकाया मांग की मात्र 55.46 प्रतिशत वसूली की गई। इसका कारण लोगों की कर वसूली के प्रति जागरूकता की कमी के साथ–साथ वसूली करने वाले कर्मचारियों की लापरवाही भी शामिल है। वर्ष 2016–17 में चालू वर्ष की वसूली जहां 81.00 प्रतिशत रही वहीं बकाया मांग की वसूली में काफी बढ़ोत्तरी देखने को मिली। बकाया मांग का 86.04 प्रतिशत की वसूली की संतोषप्रद स्थिति को प्रदर्शित करती है। वहीं वर्ष 2017–18 में पुनः राजस्व वसूली का आंकड़ा गिरता दिखाई पड़ता है। इस वर्ष चालू वर्ष के मांग की राजस्व वसूली व बकाया मांग की वसूली कमांक 68.86 प्रतिशत तथा 65.61 ही रह गया। इस प्रकार इस वर्ष का यह आकड़ा विगत 3 वर्शों की तुलना में कम ही रहा। वर्ष 2017–18 से राजस्व वसूली का कार्य स्पैरो कम्पनी के माध्यम से ऑनलाईन किया जा रहा है। छत्तीसगढ़ राज्य में दुर्ग नगर पालिक निगम सहित 5 नगरीय निकायों पर स्पैरो कम्पनी को प्रयोग के रूप में ऑनलाईन राजस्व वसूली का कार्य शासन द्वारा दिया गया है। इस प्रकार वर्ष 2017–18 में अन्य वर्षों की तुलना में चालू वर्ष के राजस्व वसूली का प्रतिशत बहुत ही कम रहा। इस वर्ष सम्पत्ति कर की वसूली 69.83 प्रतिशत तथा समेकित कर की वसूली 51.47 प्रतिशत ही देखने को मिली।

इस प्रकार वर्ष 2018–19 में कुल राजस्व वसूली मांग की 80.67 प्रतिशत रही वहीं बकाया राशि की वसूली बहुत ही कम मात्र 38.08 प्रतिशत रही। वसूली पर ये कमी कहीं न कहीं जनता की कर चुकाने के प्रति अरूचि के साथ–साथ निगम प्रशासन के व्यवहार में ढीलेपन को प्रदर्शित करती है।

Scanned with CamScanner

तालिका कमांक 02 निकाय की सम्पत्ति कर वसूली का विवरण (राशि लाखों में)

वर्ष	चालू वर्ष की मांग			बकाया मांग		
	मांग	वसूली	वसूली का प्रतिशत	मांग	वसूली	वसूली का प्रतिशत
2014–15	365.00	300.61	82.35	205.00	123.30	60.03
2015–16	707.50	460.10	81.79	195.00	94.19	48.30
2016–17	707.50	559.21	79.04	195.00	192.10	98.51
2017–18	707.50	494.06	69.83	203.69	186.31	91.46
2018–19	710.00	529.38	74.56	408.56	215.67	52.79

स्त्रोत :– कार्यालय राजस्व विभाग, नगर पालिक निगम, दुर्ग

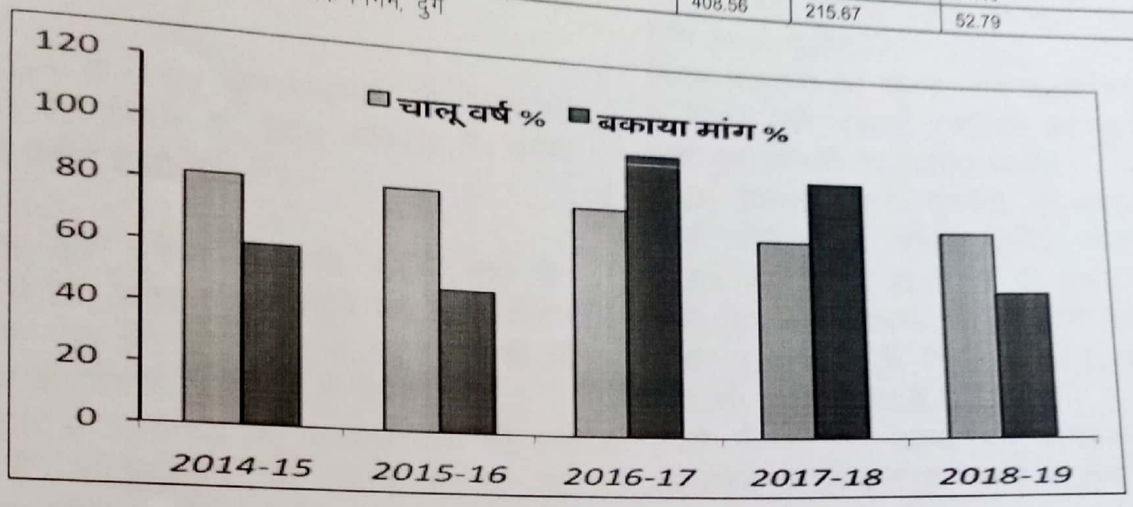

उपरोक्त तालिका कमांक 02 से स्पष्ट है कि, वर्ष 2014–15 में सम्पत्तिकर की मांग 3,65,00,000.00 रूपये की हुई यह कुल मांग को 82.35 प्रतिशत थी। यह आंकड़ा संतोषप्रद प्रतीत होता है हालांकि इस वर्ष बकाया मांग का केवल 60.03 प्रतिशत ही वसूल किया जा सका।

वर्ष 2015–16 में सम्पत्ति कर वसूली में थोड़ी कमी देखने को मिली इस वर्ष चालू वर्ष की मांग का 81. 79 प्रतिशत ही वसूल किया जा सका वहीं बकाया मांगों में भी कमी देखने को मिली जो कि 48.30 प्रतिशत रहीं। वहीं वर्ष 2016–17 में चालू वर्ष का सम्पत्ति कर जहां मांग का 79.04 प्रतिशत वसूला गया वहीं बकायां सम्पत्ति कर मांगो में सर्वाधिक वसूली अर्थात 98.51 प्रतिशत की वसूली देखने को मिली। ये वर्ष बकाया मांग की वसूली के हिसाब से अन्य वर्षों की तुलना में बहुत ही अच्छा रहा। वहीं वर्ष 2017–18 में भी चालू वर्ष की सम्पत्ति कर के मांगो का केवल 69.83 प्रतिशत वसूला जा सका वहीं बकाया मांगों का 91.46 प्रतिशत वसूली हुई। इस प्रकार वर्ष 2018–19 में कुल मांग जहां 7,10,00,000. 00 रूपये थी वहीं वसूली कुल मांग की 74.56 प्रतिशत अर्थात 5,29,38,000.00 रूपये की देखने को मिली। वहीं इस वर्ष बकाया मांग की राशि में भी कमी देखने को मिली कुल बकाया मांग का केवल 52.79 प्रतिशत अर्थात् 2,15,67,000.00 रूपये ही वसूल किया जा सका।

निष्कर्श :–

नगर पालिक निगम, दुर्ग के राजस्व वसूली के अध्ययन से स्पष्ट है कि वर्ष 2015–16, 2016–17 में चालू वर्ष के राजस्व वसूली 82.20 प्रतिशत तथा 81. 00 प्रतिशत रहा है जबकि 2018–19 में बकाया राजस्व वसूली सबसे कम अर्थात 38.08 प्रतिशत ही रहा। निगम प्रशासन को चाहिए की राजस्व वसूली हेतु लोगों को जागरूक करें तथा प्रशासन द्वारा वसूली हेतु समय–समय पर ध्यान दिया जाये। वैसे तो राजस्व वसूली की स्थिति संतोषप्रद है फिर भी निकाय को अपनी राजस्व बढ़ाने के लिये शत् प्रतिशत् वसूली की परिकल्पना को साकार करने की आवश्यकता है तभी निगम को पर्याप्त आय हो सकेगी। इसी प्रकार सम्पत्ति कर विश्लेषण से भी स्पष्ट है कि निगम प्रशासन सम्पत्ति कर की मांग के अनुरूप शत् प्रतिशत् कर वसूली नहीं कर पाता है और लोगों में चालू वर्ष का कर चुकाने में भी कमी देखने को मिली है। जहां वर्ष 2014–15 में ही चल वर्ष की मांग का अधिक अर्थात् 82.35 प्रतिशत सम्पत्ति कर वसूल किया गया वहीं बकाया कर

Scanned with CamScanner

वसूलने में कठोर रवैयों को अपनाने के फलस्वरूप 2016–17 में 98.51 प्रतिशत की कर वसूली सम्भव हो सकी है। इस प्रकार अध्यापित निकाय में राजस्व वसूली की स्थिति संतोषप्रद कही जा सकती है और सम्पत्ति कर की वसूली शत् प्रतिशत नहीं हो पा रही है।

समस्याएं :–

शोध अध्ययन के दौरान कुछ समस्याएं भी देखने को मिली जो कि निगम के सतत् विकास में सर्वदा बाधक ही प्रतीत होती रही है।

1. जनता कर चुकाने के प्रति गंभीर नहीं है। जिससे शत् प्रतिशत कर वसूल कर पाना कठिन सा हो गया है। जनता की ये प्रवृत्ति किसी भी निगम के विकास में बाधक ही है।
2. सम्पत्ति के मूल्यांकन की समस्या अभी भी बनी हुई है। स्वमूल्यांकन की पद्धति से हट कर निगम प्रशासन को कोई विकल्प सोचना चाहिए ताकि लोगों द्वारा सम्पत्ति को कम मूल्य पर नहीं आंका जा सके।
3. निगम द्वारा बनाये गये दुकानों का आबंटन भी शत् प्रतिशत् नहीं हो पाता ये एक गंभीर समस्या है कि, सम्पत्ति को जो बनकर तैयार हो गई है परन्तु उसका आबंटन नहीं होने से उससे किसी प्रकार की आय नहीं मिल पाती।
4. कर वसूली का कार्य स्पैरो कम्पनी को सौंपे जाने से निगम अधिकारी अपने को वसूली कार्य से मुक्त समझते है। उनकी ये प्रवृत्ति निगम के विकास में बाधक है।
5. द्वितीय समंको को सकलन में भी अधिकारियों के मन मे भय व आशंका का भाव देखने को मिला वे राजस्व से संबंधित सूचना देने में ऐ बार में तैयार नहीं थे।

सुझाव :–

नगर पालिक निगम, दुर्ग के संदर्भ में कुछ सुझाव प्रस्तुत किये गये हैं जिनके द्वारा निगम प्रशासन राजस्व वसूली समस्या का निकारण कर अपनी राजस्व वसूली में वृद्धि कर सकता है :–

1. निगम प्रशासन को कर वसूली हेतु मजबूत तंत्र की स्थापना करने के साथ–साथ जनता को भी कर चुकाने हेतु प्रेरित करने का प्रयास करना चाहिये।
2. जनता को कर चुकाने हेतु जागरूक करने के लिये निगम प्रशासन विज्ञापन द्वारा लोगों को जागरूक कर सकता है।
3. निगम प्रशासन को चाहिए कि, वे बकाया कर वसूली हेतु नोटिस अनिवार्य रूप से समय–समय पर देते रहे जरूरत पड़ने पर कुर्की वारंट भी भेजा जाना चाहिये।
4. निगम प्रशासन को अपनी आय बढ़ाने हेतु पुराने व बेकार पड़ी दुकानों गुमटियों को सुधार कर उन्हें पुनः किराये पर उठाना चाहिये।
5. निगम प्रशासन द्वारा दुकानों के आबंटन का कार्य शीघ्र किया जाना चाहिये बोरसी हाट बाजार का निर्माण 2015 से हो चुका है परन्तु अभी तक इन दुकानों का आबंटन नहीं किया गया। इस प्रकार से निगम प्रशासन को सचेत होने की आवश्यकता है।
6. स्पैरो कम्पनी के कार्यों का समय–समय पर मूल्यांकन व अंकेक्षण का कार्य राजस्व अधिकारी द्वारा किया जाना चाहिये।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. राजस्व वसूली का विवरण, नगर पालिक निगम, दुर्ग (2016–17 से 2019–20 तक)
2. श्री राम महेश्वरी, भारत में स्थानीय शासन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा
3. डॉ जे.सी. वैश्णव, राजस्व, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा 1977
4. एस.पी.सिंह, लोकवित्त, एस0चन्द्र एण्ड कम्पनी
5. डॉ रामशरण कौशिक, राजस्व, मिनाक्षी प्रकाशन मेरठ, नई दिल्ली
6. दैनिक भास्कर
7. हरिभूमि
8. www.census2011.co.in/census/city/278-durg.html
9. www.municipalcorporationdurg.in
10. www.cg.gov.in

Scanned with CamScanner

RESEARCH JOURNAL OF SOCIAL AND LIFE SCIENCES

HALF YEARLY, BILINGUAL (English/Hindi)

A REGISTERED REVIEWED/REFEREED RESEARCH JOURNAL
Indexed & Listed at: Ulrich's International Periodicals Directory©, ProQuest, U.S.A (Title Id: 715205)

अंक–XXVII-I हिन्दी संस्करण वर्ष–14 मार्च, 2019

UGC
Journal No. 40942
Impact Factor 3.112

JOURNAL OF
Centre for Research Studies
Rewa-486001 (M.P.) India
Registered under M.P. Society Registration Act, 1973, Reg. No. 1802, Year-1997
www.researchjournal.in

Scanned with CamScanner

UGC Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112, ISSN 0973-3914
Vol.- XXVII, Hindi-I, Year-14, March., 2019

स्थानीय स्वशासन के प्रबन्ध में नगर पालिक निगम दुर्ग के आय-व्यय का विश्लेषणात्मक अध्ययन

• एच. एस. भाटिया
•• अंकिता नामदेव

सारांश- *वर्तमान जगत में स्थानीय स्वशासन की पंचस्तरीय व्यवस्था का अभिन्न अंग है। 14 अप्रैल 1993 से क्रियान्वित 73वें व 74वें संविधान संशोधन के फलस्वरूप स्थानीय सरकार भारत की तीसरे स्तर की सरकार बन गई है। किसी भी देश की प्रगति के लिए आवश्यक है कि लोकतन्त्र की सबसे निचली अवस्था को सुदृढ़ बनाया जाए। हम प्रायः लोकतन्त्र की उपरी व्यवस्था के बारे में सोचते है। परन्तु अगर हम स्थानीय संस्थाओं को मजबूत करने का प्रयास करेगें तो निश्चित रूप से हम शहर के साथ-साथ राज्यों का भी विकास कर सकेगें। जिससे हमारा देश समुचित रूप से विकसीत राष्ट्रों की भाँति उत्तरोत्तर विकास की ओर अग्रसर हो सकेगा। स्थानीय संस्थाओं के विकास के लिए पर्याप्त वित्त की आवश्यकता होती है। चूकिं वित्त किसी भी प्रशासन का जीवन रक्त कहा जाता है। अतः हम वित्त व्यवस्था के अन्तर्गत आय व व्यय का उचित संतुलन करके अपने निगम को सभी समुचित संसाधनों से युक्त एवं समृद्ध बना सकते है।*

मुख्य शब्द- नगरीय प्रशासन, वित्त, अनुदान, अंशदान दक्षता

यदि सही दिशा मे नगर पालिक निगमो या स्थानीय स्वायत्त शासन का विकास किया जाए उनमें सही राजनैतिक आर्थिक सामाजिक संस्कारो का समावेश किया जाए नेतागण उनका सही दिशा मे सामाजीकरण कर उन्हे सही दिशा मे आगे बढ़ने की स्वतंत्रता प्रदान की जाए तो किसी भी नगरीय प्रशासन को राज्य सरकार के समक्ष भीख का कटोरा लेकर खड़ा होना नही पड़ेगा। आज किसी भी स्थानीय स्वशासन की सफलता उसके कुशल प्रशासन पर निर्भर करती है जिस हेतु शासन व्यवस्था मे व्याप्त नौकरशाही का विरोध करना होगा और शक्तिशाली स्थानीय शासन का विकास करके समाज को लोकतांत्रिक दृष्टिकोण तथा दक्षता का दृष्टीकोण के बीच फँस कर दोहरी नीति का शिकार रहा हैं। लोकतांत्रिक दृष्टिकोण के समर्थको का मानना है कि स्थानीय शासन पर्याप्त शक्तियों और साधनों में संम्पन्न हो तथा जनता अपनी इच्छानुसार उसका संचालन करें। वही दूसरी ओर दक्षता के समर्थको का विचार है कि स्थानीय शासन सरकार द्वारा स्थापित एक प्रशासनिक व्यवस्था है जिसके कुछ काम दक्षतापूर्वक करने हेतु सौंप दिये जाते है इस पर सरकारी नियंत्रण रखा जाना चाहिए। इस प्रकार इन दोहरे नीतियों से परे

• सहायक प्राध्यापक, शासकीय दिग्विजय महाविद्यालय, राजनांदगांव (छ.ग.)
•• शोधार्थी, शासकीय विश्वनाथ यादव ता. महाविद्यालय दुर्ग (छ.ग.)

Scanned with CamScanner

स्थानीय शासन को एक स्वतंत्र इकाई मानकर कुशलतापूर्वक कार्य करते हुए अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर होने की आवश्यकता है।

प्रस्तावना– स्थानीय संस्थाएं राजनीति की तृणमूल संस्थाएं होती है। इन संस्थाओं को राजनीति की प्रथम पाठशाला भी कहा जाता है। यहीं से प्रशिक्षण प्राप्त कर व्यक्ति महत्वपूर्ण राजनैतिज्ञ पद पर सफलतापूर्वक कार्य कर सकता है। नगर निगम व्यक्ति के जीवन में पालने से लेकर श्मशान तक के कार्यो का सम्पादन करता है। यह अपने नागरिको को प्राथमिक शालाओं की सुविधा, स्वास्थ्य सुविधा, व्यापार, आवागमन, वाणिज्य, जलपूर्ति एवं स्वच्छता आदि महत्वपूर्ण बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध कराती है। केन्द्र और राज्य सरकार द्वारा संचालित महत्वपूर्ण योजनाओं का सफल संचालन स्थानीय सरकार द्वारा ही सम्भव है। स्थानीय संस्थाएं अपने क्षेत्र के नागरिको को यथासम्भव सुविधाएं प्रदान करती है। इनके द्वारा प्रदान की जाने वाली सुविधाओं को दो भागों में बाँटा जा सकता है

1. पर्यावरणीय सुविधाएं/सेवा, जिसके अन्तर्गत हमारे जीवन को सुरक्षित करना, हमारी सम्पत्ति की सुरक्षा, सड़कें, स्वास्थ्य, जल आदि का ध्यान रखना पर्यावणीय सुविधाएं/सेवा के अन्तर्गत आता है। तथा

2 व्यैयक्ति सेवा/सुविधा के अन्तर्गत बच्चों के लिए स्कूल, अस्पताल, सामाजिक कल्याण विभाग आदि को रखा जा सकता है।

स्थानीय स्वशासन केन्द्र व राज्य सरकार के कार्यो का क्रियान्वयन करता है। सभी प्रजातांत्रिक व लोक कल्याणी राज्यो में शासन के बहुत से कार्य होते है। जिनका क्रियान्वयन राज्य व केन्द्र सरकार द्वारा संभव नही होता। इन्ही कार्यो के कुशलतापूर्वक संचालन हेतु स्थानीय स्वशासन की जिम्मेदारी व्यापक हो जाती है।

भारतवर्ष में संघीय शासन व्यवस्था को अपनाया गया है। जहाँ संघ व राज्य सरकार के आय के साधन निश्चित किये गये है। इनके वित्तीय अधिकार भी अलग अलग है। इस प्रकार संघ व राज्य सरकार के भाँति ही राज्य व स्थानीय सरकार के बीच भी साधनों का बटँवारा अलग अलग कर दिया गया है। दोनो ही निकाय स्वतंत्र रुप से अपने अपने क्षेत्रो मे स्वतंत्र रुप से आयो का संग्रह व व्यय का वितरण करते रहते है।

विंत्त को किसी भी प्रशासन का जीवन रक्त कहा जाता है इनके बिना प्रशासनिक निर्णयो का कार्यान्वित करना असंभव सा बन जाता है। स्थानीय स्वशासन के सभी कार्यो को सुचारु रुप से संचालन हेतु आवश्यक वित्त के स्त्रोतो को हम निम्न प्रकार से वर्गीकृत कर सकते है।

निगम की आय का स्रोत-

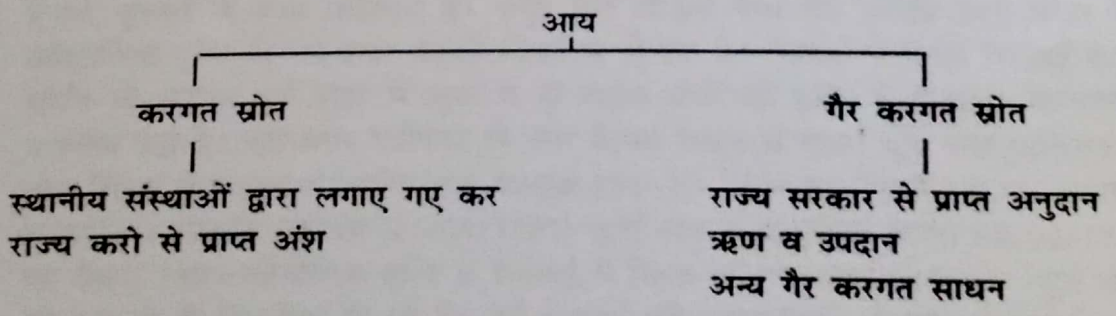

Scanned with CamScanner

UGC Journal No. 40942, Impact Factor 3.112, ISSN 0973-3914

स्थानीय संस्थाओं द्वारा लगाए गए करो को दो भाग प्रत्यक्ष कर तथा अप्रत्यक्ष कर में भी बाँटा जा सकता है। प्रत्यक्ष करो के अन्तर्गत सम्पत्ति कर, वृत्तियों या पेशो पर कर,मार्ग शुल्क, गाड़ियों पर कर, बाजार कर, जलकर, जानवरों के क्रय विक्रय पर कर आदि सम्मिलित है। अप्रत्यक्ष करो के अन्तर्गत चुंगी कर, सीमान्त कर, टर्मिनल आदि को सम्मिलित किया जाता है। निगम को कुल आय का 68 प्रतिशत भाग कर से ही प्राप्त होता है।

सम्पत्ति कर, जलकर, स्वच्छता उपकर, प्रकाश कर, अग्नि कर, और स्थानीय निकाय कर को अनिवार्य कर धारा 132 (1) न. नि. / 127 (1) न.पा. के अर्न्तगत सम्मिलित किया जाता है और व्यवसाय कर, सीमा कर, प्रदर्शन कर, विज्ञापन कर, पंजीयन शुल्क तथा बाजार फीस को ऐच्छिक कर या विवेकाधीन कर धारा 132(6) न. नि. / 127(6) न. पा. के अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता है।

शोध अध्ययन का उद्देश्य-

1. नगर पालिक निगम दुर्ग की आय-व्यय का अध्ययन करना।
2. गत वर्षो के आय-व्यय में हुए परिवर्तन की दर का पता लगाना।
3. नगर पालिक निगम दुर्ग को शासन द्वारा प्राप्त अनुदान एवं अंशदान का अध्ययन करना।

अनुसंधान प्रविधि- इस शोध अध्ययन में प्राथमिक तथा द्वितीयक दोनों प्रकार के समंकों का प्रयोग किया गया है। द्वितीयक संमकों का संकलन आय व्यय पत्रक नगर पालिक निगम दुर्ग, के द्वारा किया गया है तथा प्राथमिक संमकों का संकलन हेतु अवलोकन विधि तथा अनुसूची विधि का प्रयोग कर नगर निगम के अधिकारी व कर्मचारियो के सैम्पलिंग के आधार पर साक्षात्कार लिया गया है ताकि शोध अध्ययन को व्यवहारात्मक स्वरुप प्रदान कर सके। परन्तु फिर भी शोध अध्ययन का मूल उद्देश्य आय व्यय का अध्ययन करना है इसलिए द्वितीयक संमकों पर अधिक जोर दिया गया है जिससे कि संमकों के द्वारा शुध्द परिणाम प्राप्त किये जा सके।

शोध अध्ययन का क्षेत्र- शोध अध्ययन का क्षेत्र नगर पालिक निगम दुर्ग का सम्पूर्ण कार्य क्षेत्र है। जिला दुर्ग छत्तीसगढ़ राज्य के 27 जिलों में एक महत्वपूर्ण घनी आबादी वाला जिला है , इस जिले में 3 नगर निगम स्थित है। जबकि छत्तीसगढ़ के 27 जिलों में कुल 13 नगर निगम ही है। इस शहर का क्षेत्रफल 8701.80 वर्ग मीटर है, तथा यहाँ की कुल जनसंख्या 2,68,806 है। शहर का औसत साक्षरता दर 72 प्रतिशत है। लिंगानुपात की दृष्टि से भी यह शहर राज्य के अन्य शहरों से अच्छा ही रहा है, यहाँ प्रति हजार पुरूषों में 908 महिलाएं है। समुद्र तल से इस नगर की ऊंचाई 317 मीटर है। औद्योगिक दृष्टि से यह शहर काफी विकसित ही रहा है। भिलाई में स्थित भिलाई स्पात संयंत्र के कारण दुर्ग शहर में शुरू से ही उद्योग धंधों की दृष्टि से उपयुक्त वातावरण उपलब्ध रहा है। दुर्ग नगर पालिका से नगर निगम 1981 में बना। दुर्ग नगर पालिका से नगर निगम में रूपान्तरण अधिसूचना क्रमाकं 291- XVIII I- 81 (दिनांक 31/03/1981) असाधारण राजपत्र (दिनांक 01/04/1981) पृ.सं 468 मे प्रकाशित करके 02/04/1981 को किया गया। औघोगिक दृष्टि से भिलाई में स्थित स्टील प्लाण्ट के कारण दुर्ग शहर भी शुरु से ही विकसित ही रहा है। दुर्ग भिलाई को ट्वीन सिटी के नाम से जाना जाता

Scanned with CamScanner

है और भिलाई मिनी इंड़िया के नाम से भी प्रसिध्द है। दुर्ग शहर में पीतल व कॉसे के आभूषण बनाए जाते है। इस शहर के क्षेत्र में धान संग्रहण केन्द व वितरण केन्द के साथ साथ वन उत्पाद संग्रहण केन्द भी रहा है। 60 वार्ड वाले इस नगर में वार्ड कमांक 18 जवाहर नगर को औधोगिक क्षेत्र के नाम से भी जाना जाता है। दुर्ग शहर उधोग धन्धे की दृष्टी से भी हमेशा उपयुक्त वातावरण रहा है।

परिकल्पनाएं-

1. आय की तुलना में व्ययों का वृद्धि अधिक दर पर रही है?
2. शासन द्वारा निगम को पर्याप्त अनुदान की राशि आबंटित नही की जा रही है?

तालिका क्रमांक 1

विगत 5 वर्षो के आय-व्यय का विवरण

वर्ष	कुल आय	कुल व्यय	कुल व्यय का आय पर प्रतिशत
2011-12	738961068	491127189	6646.18%
2012-13	992898347	5075566479	511.1869
2013-14	722592300	921637061	127.5459
2014-15	751425163	778203641	103.5637
2015-16	1044630741	874344911	83.69895

स्रोत- आय-व्यय पत्रक नगर पालिक निगम दुर्ग

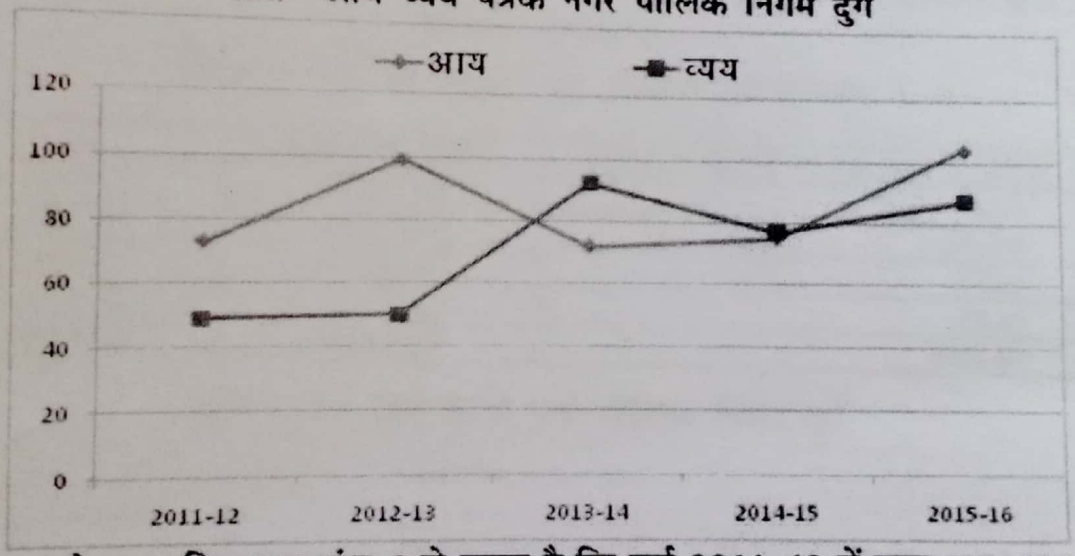

उपरोक्त तालिका क्रमांक 1 से स्पष्ट है कि वर्ष 2011-12 में कुल व्यय कुल आय का 6646.18 प्रतिशत रहा है इस वर्ष में सम्पत्ति कर बकाया 7792629 रु. तथा चल वर्ष का 18753165 रु. वसूल किये गये। वही वर्ष 2012-13 में यह 511.18 प्रतिशत हो गया इस वर्ष सम्पत्ति कर बकाया 6878775 रु. तथा चल वर्ष का 21576992 रु. प्राप्त किये गये। वर्ष 2013-14 में व्यय में 27.54 प्रतिशत की वृद्धि आय की तुलना में देखने को मिली। वर्ष 2014-15 में भी व्ययों में आयों की तुलना में 3.56 प्रतिशत की वृद्धि हुई। वर्ष 2015-16 में पुनः आयों की अधिकता के कारण व्यय का आय पर भाग 83. 69 प्रतिशत रहा इस वर्ष सम्पत्ति कर बकाया 9123764 रु. तथा चल वर्ष का 32880923 रु. वसूले गये।

इस प्रकार तालिका के अध्ययन से स्पष्ट है कि वर्ष 2011-12 के आय की तुलना में व्यय बहुत ही ज्यादा रहा परन्तु वर्ष 2012-13 में आय में वृद्धि के फलस्वरुप व्यय में

Scanned with CamScanner

भी वृद्धि देखने को मिली और वर्ष 2013-14 में व्यय का प्रतिशत आय की तुलना में 27.54 प्रतिशत रहा। इसी प्रकार से वर्ष 2014-15 में आय व्यय में बहुत अधिक देखने को मिला परन्तु वर्ष 2015-16 की आय की तुलना में व्यय उतनी मात्रा में नही हुए है।

नगर निगम के परिक्षेप्य में जहाँ आय लाभ का सूचक है वही व्यय विकास का प्रमाण भी है इस प्रकार से आय में वर्षोनुसार वृद्धि होना जहाँ निगम की संतोषप्रद स्थिति व कार्यव्यवस्था को प्रर्दशित करती है वही व्ययों में लगातार वृद्धि भी नगर के विकास की ओर अग्रसित कदम को दर्शाती है।

अनुदान और अंशदान (शासन से प्राप्त)-

विगत 5 वर्षो का अनुदान और अंशदान (शासन से प्राप्त)- इसके अन्तर्गत विभिन्न योजनाओं के क्रियान्वयन हेतु शासन से राशि प्राप्त होती है। सांसद निधि, विधायक निधि 13वें व 14वें वित्त आयोग के अन्तर्गत प्राप्त राशि, राजीव शहरी निर्धन आवास योजना, फुटपाथ योजना, अटल आवास योजना, आपदा प्रबन्धन, भागीरथी नल जल योजना आदि योजनाओं और शंकर नाला सुदृढ़ीकरण ,ठोसअपशिष्ट निपटारा एवं कचरा प्रबन्धन हेतु तथा अनेको निर्माण हेतु राशियां इस शीर्षक के अन्तर्गत राज्य सरकार से प्राप्त होती है।

तालिका क्रमांक 2

विगत 5 वर्षो के अनुदान एवं अंशदान का विवरण

वर्ष	अनुदान एवं अंशदान	अनुदान व अंशदान का कुल आय पर प्रतिशत
2011-12	523227560	70.80
2012-13	438219800	44.135
2013-14	235445100	32.58
2014-15	374496000	49.83
2015-16	666536700	6380.60

स्रोत- आय-व्यय पत्रक नगर पालिक निगम दुर्ग

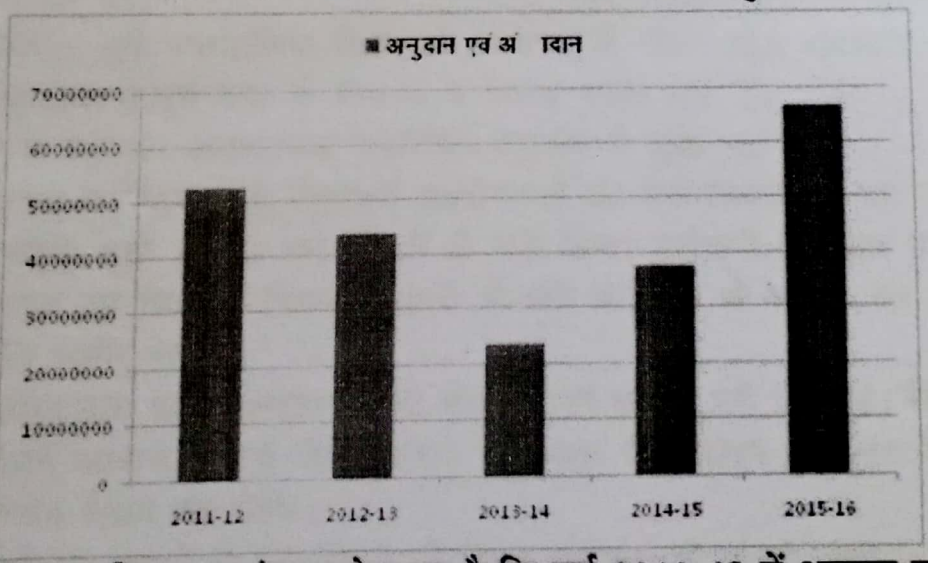

उपरोक्त तालिका कमांक 2 से स्पष्ट है कि वर्ष 2011-12 में अनुदान व अंशदान वर्ष 2011-12 की कुल आय का 70.80 प्रतिशत रहा है इस वर्ष सांसद निधि से 2999000 रु. तथा विधायक निधि से 4100000रु. के साथ साथ 13वें वित्त आयोग के अन्तर्गत 25900000 रु. प्राप्त हुए। वर्ष 2012-13 में अनुदान व अंशदान इस वर्ष की कुल आय का 44.135 प्रतिशत प्राप्त हुआ जो कि वर्ष 2011-12 की तुलना में 26.67

Scanned with CamScanner

प्रतिशत कम रहा हैं हालांकि इस वर्ष वित्त आयोग अन्य द्वारावर्षों की तुलना में ज्यादा राशि 35000000 रु. वितरित की गई। इसी प्रकार वर्ष 2013-14 में भी अंशदान कुल आय का मात्र 35.58 प्रतिशत ही रहा। वर्ष 2014-15 में बढ़कर इस वर्ष के कुल आय का 49.83 प्रतिशत हो गया इस वर्ष विधायक निधि के अन्तर्गत 18373000 रु. तथा सांसद निधि के अन्तर्गत 10214000 रु. और वित्त आयोगद्वारा16200000 रु. प्राप्त हुए। वर्ष 2015-16 में अनुदान की राशि में वृद्धि हुई और अपनी कुल आय का यह 63.80 प्रतिशत हो गयी।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि अंशदान की राशि वर्ष 2011-12 में ही अपनी कुल आय का अधिकतम 70.80 प्रतिशत रही है वही यह प्रतिशत वर्ष 2012-13 व 2013-14 में घटकर क्रमश: 44.135 व 32.58 प्रतिशत हो जाता है और यही वजह है कि द्वाराहमें कुल आय में कमी देखने को मिलती है। अनुदान व अंशदान की राशि राज्य व केन्द्र सरकार विभिन्न योजनाओं के लिए मिलने वाली महत्वपूर्ण आय का स्त्रोत है इस राशि में कमी से वर्ष की कुल आय में कमी स्पष्ट रुप से देखने को मिलती है।

निष्कर्ष- नगर पालिक निगम दुर्ग के आय व्यय के अध्ययन से स्पष्ट है कि कुछ वर्षों में आय की तुलना में व्ययों में महत्वपूर्ण वृद्धि देखने को मिली है। व्ययों की आवश्यकता की पूर्ति उस वर्ष की प्राप्त आय से नही की जा सकती परन्तु वर्ष 2011-12 व वर्ष 2015-16 के वर्षों में आय की तुलना में व्यय कम हुए है अथार्त् इन वर्षों में निगम को पर्याप्त आय हुई है। अनुदान व अंशदान से प्राप्त आय जो कि कर व दर के बाद निगम की आय का महत्वपूर्ण स्त्रोत माना जाता है (क्योकि जिस भी महत्वपूर्ण योजना का क्रियान्वयन किया जाना है उसके लिए वित्त इसी शीर्षक से मिलता है) में कमी भी देखने को मिल रही है। अत: शोध अध्ययन से स्पष्ट है कि आय की तुलना में व्ययों में अधिक दर पर वृद्धि हो रही है और शासन द्वारा प्राप्त अनुदान की राशि में भी कमी व वृद्धि देखने को मिल रही है।

समस्याएं- दुर्ग नगरपालिक निगम के अध्ययन के दौरान कुछ समस्याए भी सामने आयी यह समस्या दुर्ग नगर के विकास में बाधक प्रतीत होती है।

1. नगर प्रशासन अनावश्यक राजनैतिक हस्तक्षेप से मुक्त नही है।
2. जनता कर चुकाने में महत्वपूर्ण सहयोग नही कर पाते जिससे की कर वसूली एक समस्या बनी हुई है। कर वसूली के प्रति निगम कर्मचारी ईमानदार नही है अत: जनता का विश्वास निगम कर्मचारी के प्रति कम होने के कारण कर दायित्व के प्रति गंभीर नही है।
3. शासन द्वारा प्राप्त अनुदान का भी शत प्रतिशत उपयोग नही हो पाता। राजीव शहरी र्निधन आवास योजना जैसी योजना के सफल क्रियान्वयन हेतु नगर में भूमि का अभाव देखने को मिला।
4. द्वितीयक संमकों के संकलन में भी निगम कर्मचारी के मन मे आशंका व भय का विषय भी देखने को मिला वे सीधे व सरल सवालों के जवाब भी घुमा फिरा के दे रहे थे।

सुझाव- नगर पालिक निगम दुर्ग के सन्दर्भ में कुछ सुझाव प्रस्तुत किये गये है जिनके द्वारा निगम प्रशासन की आय व व्यय एवं अतिरिक्त समस्याओ के समाधान में सहयोग

Scanned with CamScanner

मिल सकेगा।

1. निगम प्रशासन को कर वसूली हेतु मजबूत तंत्र की स्थापना करने के साथ जनता को भी कर चुकानें हेतु प्रेरित करने का प्रयास करना चाहिए।
2. निगम कर्मचारी को अपने कार्य के प्रति ईमानदार व कर्तव्यनिष्ठ होना चाहिए जिससे जनता उन पर विश्वास कर सके।
3. निगम प्रशासन को अपनी आयों को बढ़ानें हेतु पुराने व बेकार पड़े सम्पत्तियों का सुधार कर उन्हे पुनः किरायें से देना चाहिए जैसे चौपाटी की दुकानें, महिला समृद्धि बाजार की दुकानें आदी।
4. निगम प्रशासन द्वारा ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए कि शासन द्वारा प्राप्त अनुदान की राशि का शत प्रतिशत उपयोग सम्बधित योजनान्तर्गत हो सके।
5. निगम प्रशासन को चाहिए की वे समय समय पर लोगों की राय लेते रहें ताकि उन्हे जनता की भागीदारी भी मिलतें रहें जिससें उनका सहयोग शहर के विकास में भी मिलता रहें।
6. निगम प्रशासन अपने शहर कों स्वच्छ एवं सुंदर बनाने हेतु सदैव प्रयासरत रहना चाहिए।
7. निगम प्रशसन को अनावश्यक राजनैतिक हस्तक्षेप से मुक्त अपनी योजनाओं का स्वतंत्र कियान्वयन करना चाहिए और अपने शहर को सर्वसुविधायुक्त राष्ट्रीय स्तर के शहर के रूप में विकसित करना चाहिए।

==========

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. आय व्यय पत्रक नगरपालिक निगम दुर्ग 2009-10 से 2017-18 तक।
2. श्री राम महेश्वरी, भारत में स्थानीय शासन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।
3. जिला सांख्यिकी पुस्तिका, जिला योजना एवं सांख्यिकी कार्यालय दुर्ग छ.ग. 1.3.2018
4. दुर्ग जिला स्थापना से शताब्दी समारोह (सन् 1906 से निरन्तर कदम 2006 तक)
5. डॉ हरिशचन्द्र शर्मा, भारत में स्थानीय प्रशासन, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, रिप्रिन्ट-2012
6. पढ़न साहित्य नगर निकायों के वित्तीय संसाधन और उनकी वृद्धि के उपाय, सितम्बर 2010, अखिल भारतीय स्थानीय शासन संस्थान
7. www.cg.govt.in
8. www.municipalcorporationdurg.in

Scanned with CamScanner

U.G.C. C.P.E. से अनुदान प्राप्त

शोध-पुस्तिका

चिन्हारी

2017-18

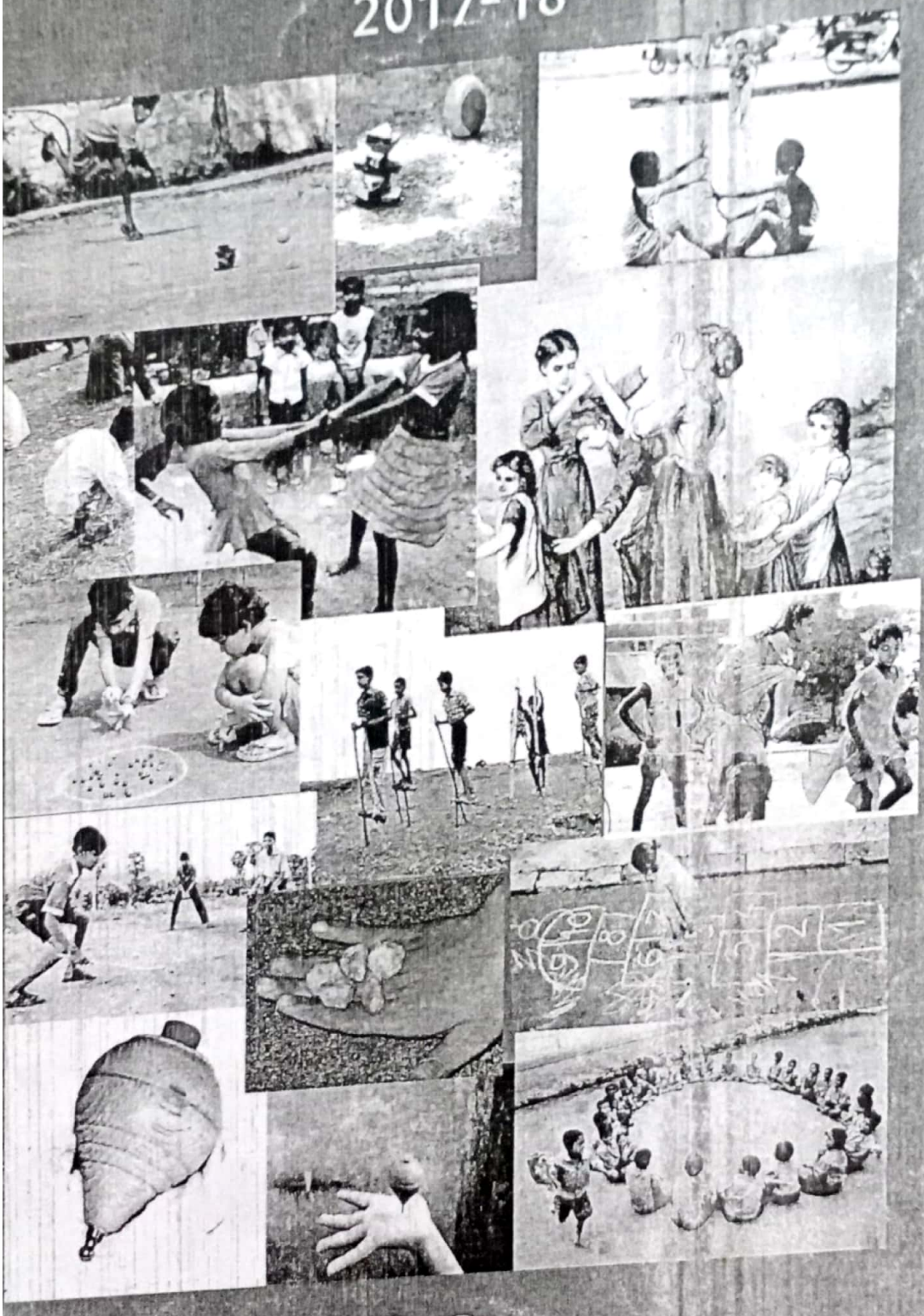

हिन्दी विभाग

Scanned with CamScanner

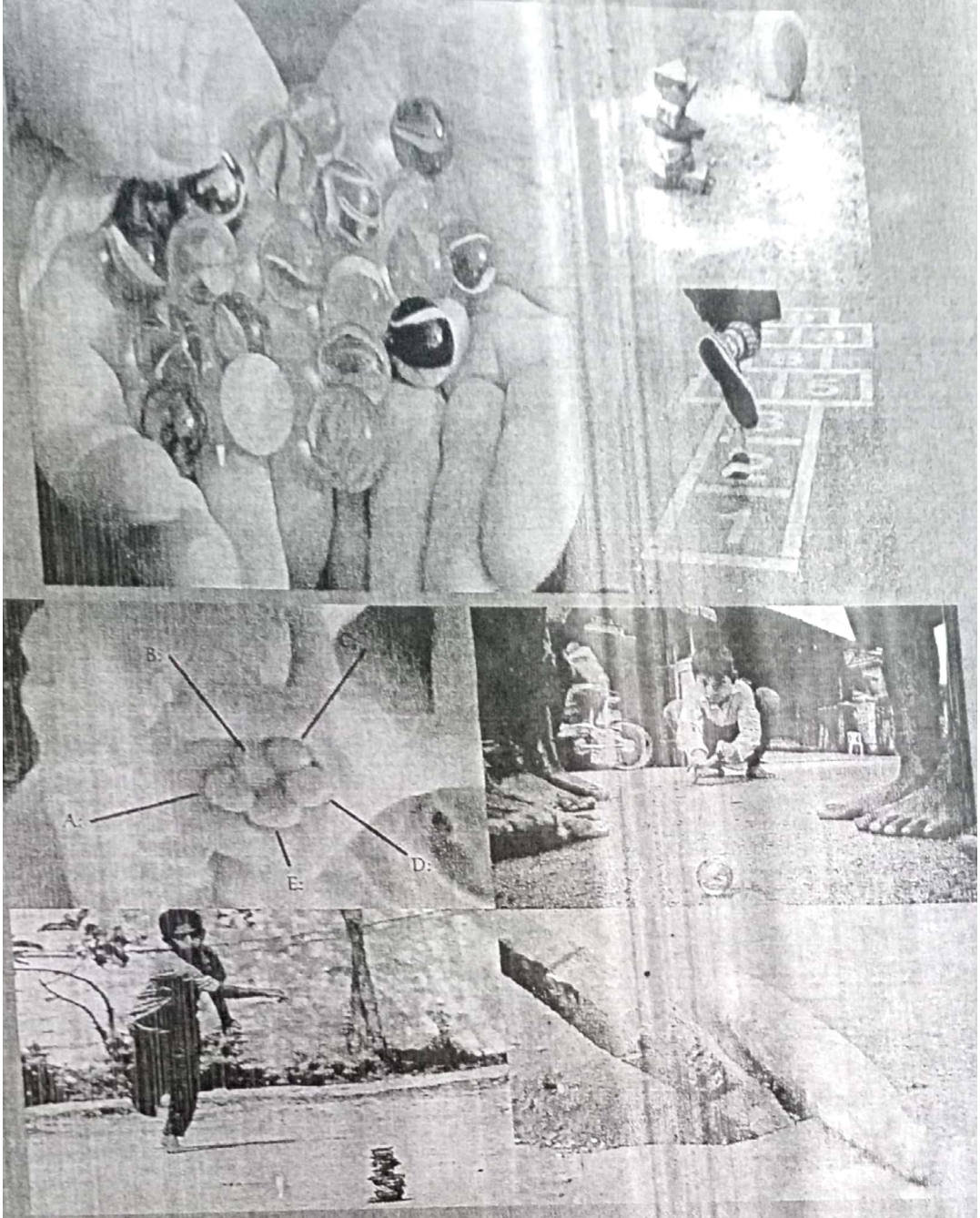

ISBN- 978-81-923135-4-2
PUBLISHER
CHHATTISGARH GYAN, RAIPUR

Scanned with CamScanner

अनुक्रमणिका

भूमिका - चिन्हारी का लोकगढ़न 5

1. डॉ. सविता मिश्रा - (i) लोक गीत भोजली 7

(ii) लोक साहित्य नाचा : विकास के विभिन्न चरण 10

2. डॉ. कल्पना मिश्रा - छत्तीसगढ़ी लोक नाट्य 14

3. डॉ. मीता अग्रवाल - छत्तीसगढ़ में प्रचलित खेल गीत 16

4. डॉ. रेणु सक्सेना - छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में लोक-कला 22

5. डॉ. चंद्र कुमार जैन - अवधारणा के आलोक में लोक का अनुचिन्तन 24

6. डॉ. भुवाल सिंह ठाकुर - छत्तीसगढ़ की चिन्हारी लोकगीत भोजली 27

7. डॉ. लालचंद सिन्हा - लोकगीतों में बस्तरिहा, लोक संस्कृति और प्रकृति 33

8. डॉ. समीक्षा चंद्राकर - लोकनाट्य की परिभाषा, क्षेत्र व स्त्रोत तथा भूमिका 37

9. डॉ. शुभा तिवारी - छत्तीसगढ़ी लोक गीत - ददरिया 39

10. डॉ. आस्था तिवारी - छत्तीसगढ़ का लोक साहित्य 42

Scanned with CamScanner

छत्तीसगढ़ का लोक साहित्य

डॉ. आस्था तिवारी
शा. नवीन महाविद्यालय बेरला, जिला बेमेतरा

भारत में विभिन्न समुदाय के लोग रहते हैं । सभी की संस्कृति कुछ भिन्नता लिये हुए समान है । विभिन्न क्षेत्रों में जाने पर वहां के लोकरंग की निराली छठा अपनी विशेष पहचान बनाती है। आज एक तरफ तो पश्चिमी संस्कृति का प्रहार हमारी भारतीय संस्कृति पर हो रहा है वहीं इस बात का संतोष है कि हमारी लोक संस्कृति व लोक साहित्य पूर्णतः समृद्ध है और इनके माध्यम से हमारी संस्कृति व लोक साहित्य पूर्णतः समृद्ध है और इनके माध्यम से हमारी संस्कृति ध्वनित होती रहती है ।

छत्तीसगढ़ के लोक साहित्य पर प्रकाश डालने के पहले लोक संसकृति का अर्थ और उद्देश्य पर एकनजर डालते हैं।

लोक शब्द का अर्थ -

लोक शब्द संस्कृत के लोक दर्शन धातु से घृत प्रत्यय करने पर निष्पन्न होता है । इस धातु का अर्थ होता है देखने वाला । इस प्रकार वह समस्त जन-समुदाय जो इस कार्य को करता है लोक कहा जाता है ।

लोक शब्द की प्राचीनता -

ऋगवेद में लोक शब्द के लिये जन शब्द का भी प्रयोग उपलब्ध होत है । जो लोक शब्द की प्राचीनता का प्रमाण देता है । पाणिनि ने वेद से पृथक लोक शब्द की सत्ता को स्वीकार किया है .। महाभाष्यकार पतंजलि ने भी जनसाधारण के अर्थ में लोक शब्द का व्यवहार लिया है ।

लोक शब्द की परिभाषा -

लोक शब्द की परिभाषा के संबंध में डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लोक के संबंध में अपने विचारों को प्रकट करते हुए लिखा है कि - लोक शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम नहीं है बल्कि नगरों अर गाँवों में फैली हुई वह समस्त जनता है जिनके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियाँ नहीं । ये लोग नगर में परिष्कृत, रूचि सम्पन्न तथा सुंस्कृत समझे जाने वाले लोगों की अपेक्षाअधिक सरल तथा अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते हैं और परिष्कृत रूचि वाले लोगों की समूची विलासिता अर सुकुमारता को जीवित रखने के लिये जो भी वस्तुएं आवश्यक होती हैं उन्हें उत्पन्न करते हैं ।

छत्तीसगढ़ का लोक साहित्य -

लोक साहित्य लोक संस्कृति का अभिन्न अंग है । छत्तीसगढ़ी की संस्कृति व लोक साहित्य अत्यन्त परपिक्व है । छत्तीसगढ़ के लोक साहित्य का प्रम्भ लगभग एक हजार वर्ष पूर्व से माना जाता है । प्रारम्भिक गाथा काल में अहिमन रानी, केवल रानी, रेवा रानी, फूल बासन पंडवानी, भरथरी, लोरिक चंदा आदि गाथाएँ प्रमुख थी । लोक गीतों में ेसहर गीत, बीहाव गीत, देवी सेवा गीत, गूर गीत , भोजली गीत, सुआ गीत, कर्मा, ददरिया, फाग, डंडा नृत्य गीत, राउत नाचा गीत, जसगीत, पंथी, ढोला मार, पंडवानी, चंदैनी, गम्मत, आदि प्रमुख हैं जो हमारे मन और वाणी पर हमेशा बने रहते हैं । लोक सुभाषित में मुहावरें, कहावतें, लोकोत्तियों और पहेलियों के भंडार हैं ।

लोक साहित्य में क्षेत्रीयता का प्रभाव झलकता है इसमें लोककला और संस्कृति के दर्शन आदिम परम्पराओं विश्वास, रीति रिवाज, मानव समाज की समस्या के रूप में होते हैं । श्री नंदकिशोर तिवारी का मानना है - लोकसाहित्य लोक के जीवन का उन्मंत प्रवाह का कल कल निनाद है । इस कल कल निनाद में हर्षविषाद के साथ अदभुत कोलाहल है । इस कोलाहल को छत्तीसगढ़ी लोक गाथा भरथरी, रेवारानी आदि के माध्यम से अनुभव किया जा सकता है । कबीरपंथ व सतनामपंथ के सामाजिक, आध्यात्मिक, धार्मिक उपदेशों को छत्तीसगढ़ में संत धर्मदास ने और संत घासीदास ने लोक शैलियों में ध्वनित किया है ।

छत्तीसगढ़ के लोगों के सुख दुःख और अभाव को दिखाने वाला छत्तीसगढ़ का लोकनाट्य मंच अपनी समृद्धता सिद्ध कर चुका है। रहस छत्तीसगढ़ा का प्रसिद्ध लोकनाट्य है । आवश्यकता से अधिक संचय नहीं करना चाहिए ।

लोकसाहित्य को मुख्य रूप से पाँच भागों में विभक्त किया जा सकता है :-

लोक-गाथा, लोक-गीत, लोक-कथा, लोक-नाट्य, लोक-सुभाषित

लोक गाथा -

लोक गाथा प्रबंधात्मक व कथा प्रधान होती है, लोक गाथाओं में संगीत और नृत्य का साहचर्य मिलता है । लोक गाथाओं में स्थानीय भूगोल, इतिहास तथा धार्मिक और सामाजिक अवस्था का वर्णन मिलता है । बुंदेलखंड का आल्ह, राजस्थान का ढोला मारू का दूहा, छत्तीसगढ़ में पंडवानी, चन्दैनी गोंदा, राजा भरथरी के वैराग और रानी पिंगला की कारूणिक कथा पर आधारित भरथरी, कंस के जन्म की कहानी पर रेवारानी की गाथा आदि छत्तीसगढ़ा की अधिकांश गाथ

Scanned with CamScanner

पुरुष प्रधान है । कनाडा अहीरिन में दिल्ली का नवाब चंदा का अपहरण करता है । चंदा का पति उसे मुक्त कराता है लेकिन चंदा को पवित्रता की परी देनी होती है ।

कतेक सत हे अहीरिन डौकी म
दिल्ली मैं रहिरा है रे जवान
भिरहा काडी में आगी लगा के
अहीरिन डऊकी ल दीन धराय ।

रेवा-रानी की गाथा में रानी अपने साथ हुई घटना को समाज के भय, ग्लानि लोकलाज के कारण छुपा लेती है । इस तरह लोक गाथाएं शोषित वर्ग के शोषण को अभिव्यक्ति करती है ।

लोक गीत -

लोक गीत स्त्री और पुरुष समान रूप से गाते हैं । लोक गीत विभिन्न अवसरों जैसे संस्कार, व्रत, त्यौहार आदि के अवसर पर गाए जाते हैं । संस्कार संबंधी गीत स्त्रियाँ गाती है जबकि होली के गीत पुरुषों द्वारा गाए जाते हैं । छत्तीसगढ़ी लोक गीतों के प्रतीक ग्राम व कृषि संस्कृति से लिए जाते हैं ।

छत्तीसगढ़ी लोक गीतों में सुआ गीत, पंथीगीत, देवगीत, कर्मा, ददरिया आदि प्रमुख है । सुआगीत में नारी मन की व्यथा और नारी जीवन की घोर वितृष्णा भागती नारी का चित्रण मिलता है । विरहिणी युवतियों की व्यथा सुनकर उनके प्रेमी तक पहुंचाने का काम यह तोता करता है :-

सुआ गीत

तिरिया जनम मोर गु के बरोबर
रे सुअना तिरिया जनम झन देय
चोंच तोर हवय लाली कुंदरू कास
रे सुअना औरनी दिखय मसूरी के दार
जोंधरी के पाना साही देना संवयारय
रे सुअना, सुन ले बिनती हजार

कर्मा गीत -

देवारों के कर्मा श्रृंगार से ओतप्रोत है । नायिका अपना प्रेम इस प्रकार व्यक्त कर रही है । श्रृंगार के अलावा सामाजिक शोषण का विरोध भी देवार गीतों में देखने को मिलता है ।

मोर बघनिला छेला मारेल चंदैन गोरी
मोर जीवके लेवैया, मोर चंदा छबीला
संगी नो हरे आन ।

पंथी गीत

सतनाम पंथ के उत्सवों में गाया जानेवाला पंथीगीत और पंथीनित्य गुरुघासीदास के जीवन और दर्शन की झलक है। समाज में व्याप्त दुःख दर्द, सामाजिक असमानता के विरूद्ध उन्होंने अलग जगाई है ।

सतनाम के पुजारी, गुरु गुने मन म
नई रोह तपसिया करे जाहो वन म
नारी ल समझा के कहै, सुन ले सफुरा बाई
बड़ी नई दौ दुनिया ल, मोर फुर्हा के कमाई
आगी अंगारा जईसे, दुःख बरे तन म ।

ददरिया

ददरिया श्रृंगार प्रधान गीत है जिसमें मंच पर एक पुरुष और महिला की जोड़ी अंग संचालन करते हुए नाचते हैं -

आना ल तोरे रवाहुँच कहिके
मोला दगा म तैं डारे आन्हुंच कहिके

लोक कथा

लोक साहित्य के क्षेत्र में लोक कथाओं का विशिष्ट स्थान है । विभिन्न लोक कथाओं का उद्देश्य उपदेशात्मक होता है लोक कथाओं में प्रेम होता है लेकिन अश्लीलता रहित । इमें मंगलकामना की भावना रहती है । कथाओं का अंत सुखन होता है । लोक कथाओं में उत्सुकता की भावना प्रधान होती है । रामकथा, महाभारत पर आधारित कथा, रा मोरध्वज की कहानी आदि ।

कहावत-तेली घर तेल होते त पहाड़ ल न नई पोते

Scanned with CamScanner

मुहावरा-कनिहा ढील होना
पहेली-गोरिया खेत के करिया बीजा

लोकनाट्य

सामाजिक समस्या को व्यक्त करने के लिए लोकनाट्य एक सशक्त माध्यम है । गम्मत, नाचा, रहस, पंडवानी, बस्तर का भतरी और माओपाटा आदि प्रमुख लोक नाट्य हैं । गम्मत हास्य व्यंग्य युक्त, माओपाटा शिकार पर पंडवानी महाभारत की कथा पर व रहस कृष्णलीला पर केन्द्रित लोकनाट्य हैं ।

निष्कर्षतः लोक साहित्य लोक जीवन की अभिव्यक्त करता है । इसमें मनोरंजन के साथ समाज की समस्याओं का चित्रण होता है। प्रेम भक्ति, वीरगाथाएं, धार्मिक (पंडवानी), श्रृंगार परक (जैसे ददरिया) आदि से समाहित काव्य होत है जिसमें लोक समाज में प्रचलित मान्याताएं प्रमुख होती हैं। लोककला जीवन जीने की कला सिखाता है । पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव के बीच भी हमारी लोकसंस्कृति बची है । पंडवानी के शीर्षस्थ झाडूराम देवांगन तीजन बाई, भरथरी गायिका सुरूजबाई खांडे पंथी के अग्रणी देवदास बंजारे, नाचा के पर्याय दाऊदुलार सिंह मंदराजी, लोककला मंच के संस्थापक रामचद्रं देशमुख ऐसे नाम हैं जिन पर हमें गर्व है छत्तीसगढ़ लोक संस्कृति को संजोए रखने के लिए ।

सन्दर्भ :

1. लोकसंस्कृति की रूपरेखा, कृष्णदेव उपाध्याय
2. छत्तीसगढ़ की लोकगाथाएं, नंदकिशोर तिवारी
3. छत्तीसगढ़ लोकाक्षर, सं.नंदकिशोर तिवारी

Scanned with CamScanner

आपदा में तनाव मुक्त करता हिंदी साहित्य

डॉ. आस्था तिवारी,
रायपुर, छत्तीसगढ़

आधुनिक युग के इस भयावह दौर में नोबल कोरोना वायरस द्वारा उत्पन्न महामारी कोविड–19 ने विश्व में अपने आपको महाशक्ति के रूप में स्थापित करने वाले बड़े बड़े देशों को परास्त कर दिया है। कोरोना वायरस ने प्रौद्योगिकी और विज्ञान के द्वारा विश्व पटल पर अपनी शक्ति का प्रदर्शन करने हेतु तत्पर उन कूटनीतिज्ञों को दिखा दिया है कि शक्ति मानव के उद्धार हेतु प्रयोग में लायी जानी चाहिए न कि संहार के लिए। हमारी भारतीय संस्कृति का यह मूल मंत्र है कि "मारने वाले से बचाने वाला बड़ा होता है" जिसकी नैतिक शिक्षा हमें बालपन से दी जाती है। हमारी भारतीय संस्कृति का मूलमंत्र मनुष्य का परिस्थितियों से विचलन न होना, संकट में धारण करना, सौहाद्र का भाव बनाए रखना और सामंजस्य बनाए रखना। कला, संगीत, साहित्य सभी हमारी संस्कृति का हिस्सा हैं। वाचिक और लिखित दोनों ही रूपों में साहित्य हमारे समाज में मानव जीवनका चित्रण करता है।

श्रीमद्भागवत गीता में कृष्ण अर्जुन को फल की इच्छा किये बिना कर्म करने की शिक्षा देते हैं:

कर्मण्येवाधिकारस्ते मां फलेषुकदाचन।
माकर्म्फल्हेतु र्भुर्माते संगोस्त्व्कर्मणि।

तनाव भरी इस जिंदगी में खासकर हमारी युवापीढ़ी को अवसादग्रस्त होने से बचाने के लिए यह ज्ञान उतना ही सार्थक आज भी है जितना अर्जुन के लिये था जबकि आधुनिक युग की भागदौड़ की जिंदगी के बीच और खासकर इस महामारी के समय में जब समस्त गतिविधियों को थाम दिया है, आर्थिक गतिविधियाँ बंद हैं। बहुत बड़ा वर्ग इसकी चपेट में आ रहा है, लाखों श्रमिक अपने घरों की ओर लौट रहे हैं, कई निजी क्षेत्रों में बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न हो गयी है। एक समाचार आया की टेलीविजन के कलाकार ने आर्थिक तंगी के कारण आत्महत्या कर ली। हमारी दिग्भ्रमित, विचलित मानव को दिशा–ज्ञान हमारी संस्कृति और साहित्य ही दे सकते हैं। 'वसुधैवकुटुम्बकम' और 'सर्वेभवन्तुसुखिनः' की भावना को समेटे हुए हमारी भारतीय संस्कृति ही समाज को इस विकट परिस्थिति से मुक्त करा सकती है।

भारतीय संस्कृति में जीवन के चार पुरुषार्थ हैं –धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। किन्तु इनके असल उद्देश्यों को भूलकर हम केवल आगे की ओर बढ़ते चले गए इस होड़ में हम आत्मकेंद्रित होते चले गए। संत कबीरदास के शिष्य संत धर्मदास इन पंक्तियों के माध्यम से चेतावनी देते हैं कि ईश्वर का नाम जपो और मन में अहंकार मत पालो:

धर्म करो भाई रे अइसन तन पायके।
नहि रहे लंकापति रावन, नहीं रहे दुर्योधन राई रे।
संत धर्मदास ,पृ.16 ,जनपदीय भाषा साहित्य (छत्तीसगढ़ी)

इसके पीछे यही कारण है कि संत काव्य ईश्वर प्राप्ति का मार्ग, मानव धर्म की राह दिखता है। अर्थ यानि पूँजी का उपयोग आवश्यकताओं की पूर्ती हेतु करते उसका कुछ भाग दान करो। मानव सेवा को ही माधव सेवा का कर्त्तव्य समझते हुए रागविराग, इर्ष्या और द्वेष से मुक्त होकर मोक्ष की प्राप्त करो। हमारी संस्कृति में शुचिता का अत्यंत महत्त्व है जिसमें देहशुद्धि के साथ ही चित्तशुद्धि पर बल दिया गया। लेकिन हुआ यह कि आधुनिकता दौर में सभ्यता ने जैसे –जैसे करवट बदली मनुष्य लोभ और स्वार्थ के वशीभूत होता चला गया। माता–पिता, भाई–बहन, सगे–सम्बन्धी सब मतलब के रिश्तों में बदल गए। देश की सीमा तोड़कर जिस विश्व ग्राम की कल्पना हमने की उसके विपरीत ,जो खाई बनी और विश्व शक्ति बनने को होड़ उत्पन्न हुई उसका परिणाम वर्तमान में कोविड–19 महामारी के दौर में चरम सीमा पर हमारे सामने है।

महामारी का इतिहास विश्व में पुराना है इतिहास के पन्ने पलटने पर 18वीं,19 वीं शताब्दी फिर बीसवीं शताब्दी

Scanned with CamScanner

में हैजा, प्लेग, स्पेनिश फ्लू जैसी महामारी तेजी से फैलने और पूरे विश्व की बड़ी आबादी को अपनी चपेट में लेने के संकेत हमें मिलते हैं। फ्रांसीसी उपन्यासकार अलबेर कामू के उपन्यास 'प्लेग' में उन्होंने दिखाया है कि पूंजी और सत्ता के चक्रों के बीच फंसी आबादी परमहामारी का हमला कितना व्यापक और जानलेवा हो सकता है। गैबरियलगार्सिया मार्केज के उपन्यास 'लव इन द टाइम ऑफ कोरोना' में प्रेम और यातना' के मिले–जुले संघर्ष की करुण दास्तान है। पाकिस्तानी कवि अहमद अली के उपन्यास 'टवाइलाइट इन डेल्हि' में महामारी में फैली अवसरवादिता को दिखाया गया है। (dw.com, 21.5.2020)

राजिंदर सिंह बेदी की उर्दू में लिखी कहानी 'क्वारंटीन' जिसका हिंदी अनुवाद संजीव कुमार और जिया उल हक ने किया , जिसमें क्वारंटीन में रह रहे लोगों की दशा का और उसके खौफनाक मंजर का चित्रण किया गया है। वे कहते हैं "प्लेग तो खौफनाक था ही, मगर क्वारंटीन उससे भी ज्यादा खौफनाक था"। लेकिन भागू और डॉक्टर मानव सेवा के लिए तत्पर मरीजों की सेवा में लगे रहते हैं अंततः महामारी खत्म होती है। मास्टर भगवान दास की कहानी 'प्लेग की चुड़ैल' में ठाकुर वैभव सिंह की पत्नी जो प्लेग की चपेट में आ जाती है, को गंगा में बहा देते हैं फिर वह बचकर वापस आती हैं। कथा सम्राट प्रेमचंद की कहानी 'ईदगाह' में हामिद के पिता की मृत्यु हैजा से होती है, 'दूध का दाम' में गूदड़ प्लेग की चपेट में आया था, निराला के उपन्यास 'कुल्लीभाट', निराला ने स्वयं इस महामारी के कारण अपना पूरा परिवार खो दिया। पहले उनकी पत्नी मनोहरा देवी फिर उनके बच्चे किंतु इस दर्द के साथ उन्होंने अपना जीवन साहित्य और समाज के नाम किया।

प्रेमचंद ने 'साहित्य का उद्देश्य' निबंध में बताया कि रचना में सच्चाई के साथ प्रौढ़, परिमार्जित और सुंदर भाषा के साथ सच्चाई और अनुभूति का समावेश आवश्यक है। उन्हीं के शब्दों में "साहित्य उसी रचना को कहेंगे जिसमे कोई सच्चाई प्रकट की गयी हो, जिसकी भाषा प्रौढ़, परिमार्जित एवं सुंदर हो और जिसमें दिल और दिमाग पर असर डालने का गुण हो। साहित्य में यह गुण पूर्ण रूप से उसी अवस्था में उत्पन्न होता है, जब उसमें जीवन की सच्चाईयां और अनुभूतियाँ व्यक्त की गयी हों। 'जीवन में साहित्य का स्थान' निबंध में उन्होंने जीवन को साहित्य का आधार कहा है। कुछ बिंदु इस प्रकार हैं – साहित्य ही मनोविकारों के रहस्य खोलकर सद्वृत्तियों को जगाता है। जहाँ ज्ञान और उपदेश असफल होता है वहां साहित्य बाजी ले जाता है। साहित्य वह जादू की लकड़ी है, जो पशुओं में, ईट पत्थरों में, पेड़–पौधों में भी विश्व की आत्मा का दर्शन करा देती है, सच्चे साहित्यकार का यही लक्षण है कि उसके भावों में व्यापकता हो, उसने विश्व की आत्मा से ऐसी हारमनी प्राप्त कर ली हो कि उसके भाव प्रत्येक प्राणी को अपने ही भाव मालूम हों। देश में उठने वाली लहर से साहित्यकार अविचलित नहीं रह पाता। साहित्य अपने देशकाल का प्रतिबिम्ब होता है। साहित्य कभी पुराना नहीं होता। वह सदा नया बना रहता है। साहित्य हृदय की वस्तु है और मानव हृदय में तब्दीलियाँ नहीं होती और वह मानव चरित्र के उज्ज्वल पक्ष को दिखाता है। (मुंशी प्रेमचंद, साहित्य का उद्देश्य, e-pustkalaya)

वर्तमान समय में भी साहित्यकारों ने अपने दायित्व को समझते हुए अपनी लेखनी के माध्यम से समाज को दिशा ज्ञान देने का प्रयास किया है। महामारी ने सत्ता और समाज के विभिन्न रूपों को उजागर किया है। कोरोना बीमारी से जूझते और कोरोना के चपेट में आए लोगों और उनकी सेवा में जो कोरोना वारियर्स खड़े हुए हैं उनके साथ किस प्रकार का व्यवहार किया जा रहा है। क्वारनटीन में रह रहे लोग किन् स्थितियों से गुजर रहे हैं। आम आदमी के मन में तरह तरह के सवाल उठ रहे हैं। महामारी अपने साथ केवल रोग नहीं लाती बल्कि अनेक बदलाव भी करती है साथ ही वह समाज के विभिन्न पक्षों को उसके यथार्थ रूप में सामने दिखाती है। कोरोना काल में हमने देखा एक तरफ मनुष्य के हृदय में बीमारी का डर और दूसरी तरफ उससे बढ़ी बेरोजगारी और सोशल डिस्टेंसिंग ने लोगों में मन हेतु उत्पन्न किया एक और जहां बीमारी से बचाव ही एक तरीका है एक बड़ी आबादी घरों में कैद है दूसरी ओर पूरी अर्थव्यवस्था को संभालने वाले लाखों की संख्या में श्रमिक मजदूर खुद और अपने परिवारों के साथ सड़क पर मीलों पैदल चल पड़े भूख प्यास से लड़ते हुए थके हारे उसने चलते हुए रास्ते में दम तोड़ा कुछ नहीं थकान के कारण पटरियों पर शरण ली औरसो गएकिंतु शायद मौत उनका पीछा कर रही थी रेल की पटरी पर सोए उन मजदूरों को चपेट मे लेती हुई ट्रेन गुजर गयी। चारों तरफ कई मजदूरों के शवों के साथ उनकी रोटी,

Scanned with CamScanner

चप्पल और सामान बिखरे पड़े थे उन्हें क्या पता था कि इतना दर्दनाक हादसा उनके साथ होने वाला है जो उनके जीवन का हरण कर लेगा। इस दुखद और हृदय को छलनी कर देने वालेदृश्य और उससे जुड़ी व्यथा को कैलाश सत्यार्थी अपनी संवेदना को इस तरह व्यक्त करते हैं:

खून से सनी रोटियों के साथ चिपकी पड़ी हैं जो
रेल की पटरियों पर, वो मेरी उंगलियां हैं
बड़ी मेहनत से कमाई थी वे रोटियां
लंबे सफर के लिए बचाई थी वे रोटियां
(अमर उजाला,14 मई,2020)

हमने देखा इस दौर में भी सत्ता, समाज मीडिया, सोशल मीडिया जहाँ अवसर मिला कुछ लोगों ने अवसरवादिता का लाभ उठाया। चाहे मजदूरों की सहायता हो, कोरोना के मरीजों की मदद का सवाल हो, चाहे आम आदमी की मजबूरी, कोरोना वारिअर्स की सुरक्षा का हो या महिलाओं की सुरक्षा और वृद्धों की परिस्थितियों का हो। हमने देखा कि इस दौर में कई कई बार इस समाज का क्रूर चेहरा दिखाई दिया है। अपनी दादी से यह कहावत बचपन से सुनते आये 'भूल गए राग रंग, भूल गई छकड़ी, तीन चीज याद रही नून, तेल और लकड़ी'। विडम्बना ऐसी कि नमक जैसी जरुरी चीज की कालाबाजारी करने से भी लोग बाज नहीं आये। हरिशंकर परसाई का निबंध 'अकाल उत्सव' ,अकाल के समय में अवसरवादिता का लाभ उठाने वालों पर तीखा व्यंग्य करता है। संकट की घडी में भी मानवता दिखाने की बजाये स्वार्थ के नए नए चेहरे उभर कर सामने आते हैं। डॉ. ओम निश्चल अपनी एक गजल में कोरोना के संकट के बीच मनुष्य के अकेलेपन पर चिंता जाहिर करते हैं।

अकेला लड़ रहा है वायरस से वह अकेले में
कि इस तनहाई में बीमार का दुख कौन बांटेगा।
के जिस दुनिया में होंगी वायरस की खेतियां उसमें
तड़प कर मरने वालों के भला दुख कौन बांटेगा।
ये दुनिया क्या इसी दिन के लिए हमने बनाई है
न होगा आदमी तो आदमी के दुख कौन बांटेगा।
(आज तक, 31 मार्च 2020)

मनुष्य और प्रकृति का साहचर्य अत्यंत निकट का है प्रकृति के बिना मनुष्य अपने जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकता है। प्रकृति में वृक्षों की महत्ता बताते हुए मत्स्यपुराण में कहा गया है कि –एक वृक्ष सौ पुत्रों के सामान होता है। मानव का जीव–जंतु से,जंगल से, नदियों से, पहाड़, पक्षी आदि सभी से गहरा समबन्ध है। वेद, पुराण, श्रुति लेख भित्ति चित्र, साहित्य में अनेक ऐसे उदाहरण मिलते हैं जो प्रकृति से अत्यंत निकटता को प्रकट करते हैं। वासुदेवशरण अग्रवाल ने अपने निबंध में मातृभूमि की महिमा का विस्तार से वर्णन किया है पुत्रोअहम्पृथिव्या अर्थात् मै पृथ्वी का पुत्र हूँ किन्तु अपनी धरती के दाय को भुलाकर अपने लाभ के लिए मनमाने उसका दोहन किया। प्रकृति को अंधाधुन्ध नुकसान पहुंचाते हुए हम भूल गए कि हमारा अस्तित्व क्या प्रकृति बिना है? कोरोना महामारी के दौर में जब लोग घरों में बंद हो गए और सारी गतिविधियाँ थम गयीं तब प्रकृति का सुंदर रूप हमें दिखाई देने लगा। पक्षी चहकने लगे, गिलहरी फुदकने लगी, वायु शुद्ध हो गयी, चारों ओर कोलाहल थम गया। जाने माने कवि अशोक बाजपेयी उम्मीद की एक किरण देखते हैं कि "कोई कहे यह पृथ्वी भी अपनी वनस्पतियों और पशु पक्षियों के साथ जल्दी ही मनुष्य निर्मित विभीषिकाओं से बाहर निकल आयेगी। 'हम अपना समय नहीं लिख पाएंगे 'कविता थमे हुए दौर में प्रकृति की वापसी देखती है,हमारे बुरे वक्त पर हमें चिढाते हुए फूलों को खिलखिलाते और गिलहरियों को भागते देखती है:

बेमौसम हवा ठंडी है;
यों बसंत हैं और फूल खिलखिला रहे हैं

Scanned with CamScanner

मानो हमारे कुसमय पर हंस रहे हों
और गिलहरियाँ तेजी से भागते हुए
मुंह चिढाती पेड़ो या खम्भों पर चढ़ रही है–

(समालोचन.blogspot.com)

आधुनिकता के भौतिक साधनों के पीछे भागते मानव को महामारी चेतावनी दे रही है कि अपना अस्तित्व बचाए रखना है तो प्रकृति की रक्षा का दायित्व भी समझना होगा। लेकिन मद में चूर मानव आज भी अपनी सुख सुविधा के लिए प्रकृति को नजरन्दाज करता है जिसका परिणाम हम देख रहे हैं कि प्रकृति आज फिर अपनी विजय पर हंस रही है। प्रकृति से छेड़छाड़ और उसके दोहन के अतिरेक का परिणाम हमारे अतीत में भी दिखाई देता है। कामायनी का मूल उद्देश्य ही है जीवन में समरसता के साथ आनंद की प्राप्ति करना। जयशंकर प्रसाद ने कामायनी के 15 सर्गोंचिंता, आशा, काम, वासना, लज्जा, कर्म, इर्ष्या, इड़ा, स्वप्न, संघर्ष, निर्वेद, दर्शन, रहस्य, आनंद में आज के समय में मानव जीवन को उसके सम्पूर्ण परिवेश के साथ चित्रित किया है। देवताओं की विलासी प्रवृत्ति और अहंकार से रुष्ट प्रकृति के प्रकोप ने जल्पलावन से सब कुछ नष्ट कर दिया बचे अगर तो मनु जो हिमगिरी के उत्तुंग शिखर पर एक शिला की शीतल छांव में बैठे भीगे नयनों से प्रलय प्रवाह देख रहे हैं। चिंतासर्ग में मनु सोचते हैं।

प्राकृति रही दुर्जेय ,पराजित,हम सब थे भूले मद में,
भोले थे ,हाँ तिरते केवल सब ,विलासिता के नद में।

चिंता की विभिन्न अवस्थाओं से गुजरते हुए चिंतन करते मनुकी नौका टकराती है उत्तगिरि के शिर से, जीवन पुनः दिखाई देता है:

किन्तु उसी ने ला टकराया,
इस उत्तरगिरि के शिर से।
देव–सृष्टि का ध्वंस अचानक,
श्वास लगा लेने फिर से।

निराशा और हताशा के इन क्षणों के बीच मनु को आशा का प्रभात नजर आता हैं:

वाष्प बना उड़ता जाता था,
या वः भीषण जल–संघात।
सुअर्चक्र में आवर्तन था,
प्रलय निशा का होता प्रात।

कोरोना से उत्पन्न महामारी ने एक विकट समस्या को जन्म दिया है। साहित्य हमें एक नई सुबह के लिए जगाता है केवल समस्या से ही परिचय नहीं कराता बल्कि उससे उबरने की राहत भरी उम्मीद का रास्ता हमें दिखाते हुए निराशा से भरे जीवन में आशा का संचार करता है। तुलसीदास जी कहते हैं कि 'अस कही लछिमनम कुहुँक पिल्यायो। देखि दशानन विस्मय पायो।' जब मेघनाद की वीर घाति निशक्ति लगने से लक्ष्मण मूर्छित हो गये तो उन्हें रावण नहीं उठा पाया लेकिन हनुमान जी उठाकर राम के पास ले गए। तात्पर्य यह है कि यदि हमने लक्ष्मण जैसी तपस्या से अपने आप को तैयार कर लिया है तो कोरोना रूपी रावण भी हमारे सामने खुद ही लाचार हो जाएगा। महाभारत में कृष्ण अर्जुन को उपदेश देते हैं कि अपनी शक्तिअपनी योग्यता बढ़ाने में लगाना चाहिए और नजर प्रतिद्वंदी की कमजोरी पर रखना चाहिए साथ ही कृष्ण मानते थे कि अपने आप को इस प्रकार स्थापित करो कि प्रतिद्वंदी स्वयं ही अपने आप ही हारा हुआ माने। जन्म और मृत्यु की अनवरत चलने वाली प्रक्रिया के उदाहरण के द्वारा पंडित विजयशंकर मेहता कहते हैं अपने जन्म को अपने मनुष्य होने को सार्थक बनाते हुए मृत्यु तक की यात्रा को इतनी ऊंचाई दे दो कि फिर कैसा भी प्रतिद्वंदी सामने हो विजय अपनेआप कदम चूमेगी। हमारा अतीत हमें बताता है कि समय बलवान होता है और इसी के अनुरूप हमें चलना पड़ता हैद्य पांडवों को अज्ञातवास के समय

Scanned with CamScanner

अपनी पहचान को छुपा कर रखने की शर्त थी इसलिए राजकुमार होते हुए भीजबमत्स्य जनपद की राजधानी विराटनगर में उन्होंने शरण ली तो भीम ने रसोईयए का, अर्जुन ने नृत्य शिक्षक के रूप में काम किया? सभी ने समय अनुरूप ही हमें अपने आप को ढालना पड़ता है। आज की पीढ़ी कल का भविष्य है। अतः महामारी के दौर से उबरने के लिए हमें नए विकल्प तलाशने की जरुरत है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने भारत–भारती में संसार में समय परिवर्तन चक्र की ओर इंगित किया है:

संसार में किसका समय है एक सा रहता सदा,
है निशिदिवा सी घूमती सर्वत्र विपदा–संपदा।
जो आज एक अनाथ है, नरनाथ क होता वही,
जो आज उत्सव मग्न है, कल शोक से रोता वही।

भारत के गौरवशाली इतिहास को स्मरण करते हुए आज हमारे समाज को महामारी से संघर्ष करते हुए ही पुनरस्थापित करने की चुनौती है। शिक्षा के विकल्प, स्वास्थ्य सुविधाएँ, काम से वंचित एक विशाल तबके के लिए रोजगार तलाशने की और कोरोना से जूझते समाज को मजबूत करने की आवश्यकता है। अवसरवादिता, अराजकता सांप्रदायिकता, जातिवाद से निकल कर समाज में मानवीय संवेदना को पुनः जगाने की आवश्यकता है। आपदा के इस दौर में महामारी से बचना, समाज को आर्थिक रूप से मजबूत बनाना और समाज में मानवीय करुणा बनाये रखने और प्रकृति के प्रति कृतज्ञता का भाव रखते हुए के लिए स्वस्थ मष्तिष्क की आवश्यकता है। साहित्य संकट से जूझ रहे मनुष्य को मानसिक संबल देता है। अतीत से साक्षात्कार कराते हुए, वर्तमान से टकराते हुए भविष्य के लिए सचेत करता हुआ वर्तमान की निराशा और पीड़ा के दौर में संकटकालीन चुनौतियों के बीच संवेदना के साथ प्रतिरोध दर्ज कराते हुए नयी संभावनाओं के साथ समाज को नई दिशा देने केदायित्व का निर्वहन साहित्य करता आया है।

Scanned with CamScanner

छत्तीसगढ़ी लोकगीत 'करमा'

- आस्था तिवारी

लोक जीवन सरल और सहज होता है। जीवन के विभिन्न पहलुओं को लेकर आगे बढ़ता लोकजन विभिन्न परिस्थिति विचार और अभिव्यक्ति प्रदान करता है। कभी वह चिंता से घिरा नजर आना है तो कभी दुःख और अभाव से घिरा हुआ मनुष्य जीवन के विविध पक्षों से संघर्ष करता हुआ आगे बढ़ता रहता है। लोकजीवन इन विभिन्न पक्षों से संघर्ष करता हुआ आगे बढ़ता रहता है। लोकजीवन इन विभिन्न पक्षों की अभिव्यक्ति अपनी वाणी के माध्यम से विभिन्न उपागमों जैसे लोकगीत, लोकनृत्य, लोकनाट्य, गम्मत, नाचा आदि के माध्यम से सुख-दुःख, हास-परिहास और लोक संसकृति के चित्र प्रस्तुत करते हैं।

डॉ. चिंतामणि उपाध्याय के अनुसार सामान्य लोकजीवन की पार्श्वभूमि में औचित्यरूप से अनायास ही फूट पड़ने वाले मनोभावों की लयात्मक अभिव्यक्ति लोकगीत कहलाती है।'

लोकगीत सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, जीव न का मनोहारी चित्र प्रस्तुत करते हैं। छत्तीसगढ़ अंचल में लोकगीतों की अतुल सम्पत्ति है। प्राचीन काल से अब तक विभिन्न रीति रिवाज से जुड़े लोकगीतों की धुन नृत्य, स्वर, लय, वाद्यान्त्रों के संयोजन द्वारा मन को मोहित करने वाली होती है। विभिन्न अवसरों पर गाये जाने वाले इन गीतों में हास-परिहास, उल्लास तो झलकता ही है जीवन से जुड़े संस्कार और दर्शन, प्रकृति के प्रति प्रेम और आभार, सुख और दुःख की अभिव्यक्ति भी मिलती है।

छत्तीसगढ़ी लोकगीतों में सुधा गीत, गौरागीत, जंवारा गीत, झंडा गीत, ददरिया (श्रृंगार गीत), बॉस गीत, भरथरी, करमा प्रमुख हैं। करमा गीत छत्तीसगढ़ी अंचल का विशिष्ट गीत है। गीत है तो वाद्य यानि मांदर की थाप सुनते ही पैर अपने आप ही थिरक उठते हैं और आस पास के सभी लोग सामूहिक रूप से इकट्ठे होते हैं अतः गीत, संगीत, वाद्य के संयोजन से अनायास ही बोल फूट पड़ते हैं....करमा ल खेले जाबो मांदर के ताल म। करमा नृत्य व गीत कर्म के देवता को समर्पित होता है। करमा गीत की शुरूआत के बारे में लोगों का कहना है कि बहुत साल पहले एक राजा हुआ करता था जिसका नाम करमसेन था। राजा की जिंदगी में विपत्ति आई तब भी राजा ने हिम्मत नहीं हारी और ईश्वर के सामने गीत गाते हुए नृत्य किया धीरे-धीरे राजा की सभी समस्याएं दूर हो गयी।

Scanned with CamScanner

करम वृक्ष की टहनी को भूमि पर गड़ाकर चारों और घूम-घूम कर्मा नृत्य किया जाता है। करमा गीत मांदर के साथ गया आता है। जैसी ही मांदर की आवाज सुनाई देती है श्रम करते लोग दौड़ कर आते है और झूम कर नृत्य करने लगते है। करमा गीत और नृत्य जिस जगह पर होते है उसे अन्खरा कहते हैं।

नई फसल की खुशी में करमा गीत और नृत्य किये जाते है। मनोरंजन के साथ ही उपदेश भी करमा लोकगीतों के माध्यम से व्यक्त होता है:-

चार पैसा के साबुन लेले, मलमल धो ले काया अंगी कपट के दागी न छूटे, कैसे निर्मल हो है माया।

छत्तीसगढ़ में करमा नृत्य की विभिन्न शैलियां प्रचलित हैं। जैसे-

1. **माढ़ी करमा :** बस्तर जिले के अबूझमाड क्षेत्र में माड़िया जनजाति की महिलाओं विशेष रूपसे सामाजिक उत्सव पर यह नृत्य करती हैं।

2. **भुइहांरी करमाः** बिलासपुर जिले में भुडहरी चार पैसा के साबुन लेले, मलमल धो ले काया अंगी कपट के दागी न छूटे, कैसे निर्मल हो है माया।

छत्तीसगढ़ में करमा नृत्य की विभिन्न शैलियां प्रचलित है। जैसे-

3. **माढ़ी करमा :** बस्तर जिले के अबूझमाड क्षेत्र में माड़िया जनजाति की महिलाओं विशेष रूपसे सामाजिक उत्सव पर यह नृत्य करती हैं।

4. **भुइहांरी करमाः** बिलासपुर जिले में भुडहरी जनजाति कार्तिक महीने में 'धरम देवता' का पूजा उत्सव मानती हैं।

Scanned with CamScanner

5. देवारा करमाः इनकी नृत्य व संगीत की अपनी विशेष संस्कृति है। ये करमा त्यौहार पर नृत्य करते हैं।

करमा गीत और नृत्य के माध्यम से छत्तीसगढ़ की वेशभूषा और श्रृंगार झलकता है। सामान्य जनजीवन के चित्रण को प्रस्तुत करता है वरन प्रेम और राग की बानगी इन गीतों के माध्यम से झलकती है-

मया के डोर बांध लेना जी....तोर हमर मया
रहि जाहिं,
मया के डोर बांध लेना जी।
चांउर के जिला और सीथा के अंगाकर जी सीथा
के अंगाकर
बाटा के अंगरा प्रेम मन के आगर, प्रेम मन के
आगर
अरे किस्मत ह कतक दिन तरसाही
मया के डोर बांध लेना जी...[1]
गिल्ली डंडा, भोंरा बाटी, डंडा पचरंगा जी डंडा
पचरंगा
तरी पतीही ऊपर कुरता भरभंगा जी कुरता
भरभंगा।
लैकापन के सुरत लहुट आही मया के डोर बांध
लेना जी...[2]
सावन के कमरा खुमरी, अर तता के बोलीजी...
तेह के गाथ होंगे, भौजी के ठिठोली जी,
भौजी के ठिटोली
छिन भर के मया पीरा, छिन भर के गारी जी,
छिन भर के गारी
छिन भर के चांदनी हे फेर अंधियारी जी फेर
अंधियारी
मया के डोर बांध लेना जी...3...4

गीत के माध्यम से केवल मनोरंजन ही नहीं बल्कि उस क्षेत्र विशेष की लोकभाषा, शब्द वेशभूषा, पारंपरिक आभूषिण छत्तीसगढ़ी व्यंजन, पारंपरिक खेल, खेती के औजार, नदियों-झरनों के नाम, पेड़-पौधे, बालपन की मधुर स्मृतियों को समाहित करते हुए, रिश्तों की नोक झोंक, जीवन के सुखदुख, उतारचढ़ाव के साथ कर्म कर्मरत आगे बढ़ते रहने की प्रेरणा ही करमा का प्रमुख उद्देश्य है। ईश्वर की स्तुति से लेकर श्रृंगार और जीवन के विभिन्न पक्ष करमा के माध्यम से प्रस्तुत होते हैं।

Scanned with CamScanner

नृत्य की शुरूआत से पहले ईश्वर की स्तुति गीत के माध्यम से करते हैं और संबोधन में नाम न लेते हुए 'गोलेंदा जोड़ा' पुकारते हुए कहते हैं कि करमा नृत्य करने से पहले माता सरस्वती को माता गौरी और गणेश जी की स्तुति करते हैं। फिर गाँव के देवी देवता के पैर पड़ते हुए गुरू का वंदन करते हैं।

चलो नावे जाबा रे गोलेंदा जोड़ा,
करमा तिहार आये हे नाचे जाबो रे,
पहली मै सुमिरो सरस्वती माई रे,
पाछू गौरी गणेश रे
गोलेंदा जोड़ा।
गाँव के देवी देवता के पईया लगा रे,
गोड लागों गुरूदेव के रे
गोलेंदा जोड़ा....।[5]

नायक और नायिका की नोकझोंक का चित्रण जिसमें नायिका बाजार से श्रृगार की सामग्री लेने की जिद करती है हास्य-व्यंग्य के माध्यम से नायक नायिका को चिढ़ाता है-

एक गोर खोर हवे
अंखि तोर कानी रे।
तब ले लहोच ले थे
जरे तोर जवानी रे।।
देखो संगी ये दुनिया के बड़ाई ला
डौकी डौका अऊ कन्ना के लराई ला
कानी आँख माँ काजल ला आंजन है
दतली दांत माँ मिस्सी ला लगाये है
बाजार जये बार झगरा लगाये है
माथे की टिकली तोर चंदा अस चमकत हे
एक गोढ़ खोर हबे.....।[6]

छत्तीसगढ़ के सुदूर जनजातीय क्षेत्र में प्रियतम के वियोग से व्यथित जनजातीय नारी हृदय की कोमल भावना को नायिका गीत के माध्यम से व्यक्त कर रही है-

ओ दीदी मोर पिया गए है परदेस,
न कोनी आवे न कोनी जावे, न भेजे सन्देश
कांकर बर संवारो केस, पिया बसी परदेस,
ओ दीदी मोर.....।[7]

गाँव में नयी नयी युवती के सामने समस्या है की पनी कहा से लेकर आये, जब उसे बताया जाता है कि 'जाम झरिया' से पानी मदद से तीसरे कोस पर जाम झरिया पहुच जाती है और गगरी हाथ में पकड़कर जाम झरिया को निहारती है-

Scanned with CamScanner

हाय रे हाय, मैं तो नई जानों जी
कहाँ बोहावे जाम झारिया।
घर से निकरे फरिका मेर थाढ़े
कहाँ बोहावे जाम झारिया।
डोंगरी च डोंगरी तै चढ़ी जावे
नीचे बोहावे जाम झरिया
एक कोस रेंग, दुसरे कोस रेंगे
तीसरे कोस पहुंचे जाम झरिया।
हाथे मा गगरी, मूढ़ मा गुडरी,
खरे देखेय जाम झरिया।[8]

चालाकी और चतुराई से दूर साहचर्य कि भावना के कारण परिवार का महत्व और प्रेम का मर्म भरत और कैकेयी संवाद में झलकता है-

में न जियों बिन राम ओ माता
में न जियों बिन राम
राम लखन सिय बन पठवाए
नहीं किये भाल काम
भल हार मोर गद्दी सूना, लखन बिना ठकुराई
अवध रहूहैन कही काम
राम बिना मोर गद्दी सूना, लखन बिना ठकुराई
सिया बिना मोर मंदिर सूना
कोन करे चतुराई।[9]

नगरीय जीवन की कृत्रिमता और साधनों से दूर सूदूर वनंचालों में रहने वाले आदिवासी जन हर्ष-उल्लास, सुख-दुःख को करमा लोकगीत व नृत्य के माध्यम से श्रम उपरांत सामूहिक रूप से आनंद व्यक्त करते है। इस पर्व की मूल भावना को कालांतर में कर्म एवं भाग्य से जोड़कर इसका एक दूसरा पहलु सामने लाया गया है। कर्मा नृत्य-गीत कर्म का परिचायक है जो हमें कर्म का सन्द्रश देता है।[10]

नृत्य-संगीत, पर्व-उत्सव लोकजीवन का अभिन्न हिस्सा है। जनजातियाँ अपने देवी-देवताओं का बास प्रकृति, पशुओं, पेड़ पौधों पर मानती हैं और इन्हीं पूजा की परंपरा रही है। ये अपनी परम्पराओं से बहुत गहरे जुड़े होते है। पूजित वृक्षों में साल एवं करमा वृक्ष प्रमुख हैं। विभिन्न क्षेत्रों के करमा गीत व नृत्यों में एक ओर स्थानीयता की भिन्नता है बल्कि उनकी अपनी विशेषता भी है। करमा लोगकगीत नृत्य माधुर्य के साथ लोकजीवन में समाहित रीतिरिवाजों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित करने के साथ ही सामुदायिक भावना व एकता का सन्देश देता है। प्राकृतिक जीवन इन्हें सरलता और सादगी सिखाता है। संस्कृति के विविध रंग करमा गीतों और नृत्य के माध्यम से झलकते हैं। प्रकृति के बीच रहकर प्रकृति को सम्मान देते हुए उसकी रक्षा का

Scanned with CamScanner

भाव जागृत करने में हमारी लोकसंस्कृति की अहम् भूमिका है। अतः छत्तीसगढ़ी जनमानस से दूर होती जा रही लोकसंस्कृति की मौलिकता को आधुनिकता के प्रभाव से की बचाकर पुनः जीवन प्रदान करने की आवश्यकता है।

सन्दर्भ :

1. हिंदी लोकसाहित्य शास्त्र, डॉ. अनसूया अग्रवाल, पृ. 109
2. igccnic.in
3. छ.ग. समाज संस्कृति, डॉ. राजेश शुक्ला
4. शोध-प्रकल्प। डॉ. शीला शर्मा, डॉ. श्रद्धा चंद्राकर, शोधार्थी श्री विजय कुमार, शा.वी.वाय.टी. विज्ञान महाविद्यालय दुर्ग छग
5. करमा-गीत 1, कविता कोश
6. छत्तीसगढ़ी लोकगीतों को लोकतात्विक तथा मनोवैज्ञानिक अनुशीलन, डॉ. हनुमंत नायडू
7. वही, पृ. 52
8. करमा-गीत 4, कविता कोश
9. छत्तीसगढ़ लोकगीतों का लोकतात्विक तथा मनोवैज्ञानिक अनुशीलन, डॉ. हनुमंत नायडू
10. डॉ. भरत पटेल, सेवानिवृत्त प्रोफेसर, भूतपूर्व संकायध्यक्ष, लोकसंगीत एवं कलासंकाय इंदिया कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़

■■■

Scanned with CamScanner

ISSN 097- 6459

नौकर की कमीज : भारतीय निम्नमध्यवर्ग का यथार्थ

'नौकर की कमीज' उपन्यास एक ऐसे निम्न मध्यवर्गीय बाबू की कहानी है जो अपने आसपास की घटनाओं, चीजों, रोजमर्रा के जीवन में नौकरी में होने वाली कठिनाईयों में संघर्ष करती है या कहें कि अपनी जिंदगी की घुटन के अंतर्संघर्ष में जीता है।

'भारतीय निम्नमध्यवर्ग के यथार्थ की जैसी विलक्षण और गहरी पहचान विनोद कुमार शुक्ल के उपन्यास ''नौकर की कमीज'' में है वह हिन्दी उपन्यास का विरल अनुभव है। ऊपर – ऊपर से सिनिकल और कौतुक विनोदपूर्ण। भीतर के सार्थक विडम्बना और मार्मिक जिजीविषा की झलक । एक दम साधारण जीवन की कुढ़न । हास्यापद स्थिति में भी क्रूर व्यंग्य मखौल और आत्मभर्त्सना के प्रसंगो तथा व्यर्थबोध से चलकर जहाँ उपन्यास खत्म होता है – वहाँ है जीवन, जीवन का साहसपूर्ण स्वीकार।'[1]

'उपन्यास का संपूर्ण कथानक औसत निम्नमध्यवर्गीय जीवन और उसके भीतर पैदा होने वाले संभावित सरोकारों का दस्तावेज है। यह एक विश्वनीय लेखा जोखा है, जो उस सीमा का अतिक्रमण नहीं करता जिसके भीतर उसकी आकार ग्रहण करती है। वर्षा ठीक नहीं होने पर फसल नहीं तो चावल महंगा हो जाता है और चावल देने वाला गुप्ता चार रूपए की उधारी होते ही कथा नायक का राशन कार्ड अपने कब्जे में कर लेता है।' महंगाई बढ़ते ही इसकी मार सीधी एक सामान्य व्यक्ति पर पड़ता है।

'घबराहट लग रही हो तो जोर से गहरी सांस लो।' मैंने कहा– साड़ी और पेटीकोट ढीला कर वह जोर जोर से सांस लेने लगी। वह ज्यादा से ज्यादा हवा को खींच रही थी हॉफते–हॉफते वह मेरी तरफ देख के मुस्कुराई। जवाब में मैं भी मुस्कुराया।

विनोद कुमार शुक्ल लिखते हैं – 'मालकिन की आदत होती है कि घर में यदि कोई चीज बनती है तो उसमें से थोड़ा नौकरानी को जरूर चखा दिया जाता है रोजमर्रा की कोई चीजों को चखाने का काम नहीं किया जाता। चाहे वह कितनी भी बढ़िया चीज क्यों न हो। वह देखने वालों के मन में कोई लालच पैदा नहीं करता। उसे देखने की आदत पड़ जाती है। कोई चीज चखा दी जाती है तो उसकी ललचाई दृष्टि और उस चीज के बीच में परदा पड़ जाता है तब खाने वाले पूरे संतोष के साथ पेट भरकर खा सकता है, नहीं तो खाने में मजा नहीं आता।'[2] यही कारण है कि संतू बाबू की पत्नी को डाक्टरनी विशेष तौर पर परवल की सब्जी देती है। दूसरी ओर संतू बाबू दफतर के साहब और उनकी पत्नी है। जो अपने या घर के नौकर को घर की चींजे नही देते थे। काजू में घुन लगने पर वे अपने घर आने जाने वाले बाबूओं को देते हैं।

निम्नमध्यवर्गीय आदमी उदार विचारों का हो सकता है लेकिन वैसा न हो पाना उसकी लाचारी है।

संतू बाबू कहते हैं – 'मुझे एक रूपए का नोट सड़क पर मिलता तो किसी भूखे आदमी को चार रोटी खरीदकर देता।'[3] लेकिन साथ ही यह भी कहते है कि उन्होने भिखारी को रोटी देना बंद कर दिया है क्योंकि खर्च पूरा न बैठने के कारण दया और उदारता कम हो जाती है, यह बात जल्दी बात जल्दी समझ में आती थी। उदारता और दया का सीधा सीधा संबंध रूपए से हैं। सिर पर हाथ फिरा देना न तो उदारता होती है, न दया।

'उपन्यास का संपूर्ण कथानक औसत निम्नमध्यवर्गीय जीवन और उसके भीतर पैदा होने वाले संभावित सरोकारों का दस्तावेज है। यह एक विश्वनीय लेखा जोखा है, जो उस सीमा का अतिक्रमण नहीं करता जिसके भीतर उसकी आकार ग्रहण करती है। वर्षा ठीक नहीं होने पर फसल नहीं तो चावल महंगा हो जाता है और चावल देने वाला गुप्ता चार रूपए की उधारी होते ही कथा नायक का राशन कार्ड अपने कब्जे में कर लेता है।'[4] महंगाई बढ़ते ही इसकी मार सीधी एक सामान्य व्यक्ति पर पड़ता है। गॉव के किसान,

डॉ. आस्था तिवारी
शा.नवीन महा.बेरला,
बेमेतरा(छ.ग.)

Received : 30 Jan, 2017 Reviewed : 18 Fab, 2017 Accepted : 25 Feb, 2017

Scanned with CamScanner

मजदूर घर में बचा सामान लेकर बाहर काम की तलाश में बाहर निकल जाते हैं। फसल की बर्बादी सुनकर दलाल सक्रिय होते जाते हैं और जो कुछ बचा रहता है उसके साथ बाजार में आकर काम की तलाश में खड़े हो जाते हैं।

'नौकर की कमीज' उपन्यास में जीवन के यथार्थ से जुड़े वे सभी पहलू है, जो एक मध्यवर्गीय बल्कि निम्नमध्यवर्गीय जीवन में देखने को मिलता है। संतू बाबू के जीवन चित्र को दिखाकर विनोद कुमार शुक्ल ने हमारे समाज के सच को उजागर किया है। संतू बाबू की स्थिति उस समय दयनीय और सोचनीय है जब वे अपनी पत्नी के साथ घूमने जाना है लेकिन वे लोग जैसे ही बाहर निकलते है घर में ताला नही होंने के कारण नही जा सकते। उनकी पत्नी ताला देने से मना कर देती है। संतू बाबू और पत्नी संवेदनाओं का यह मार्मिक वर्णन इस संवाद में मिलता हैं –

'घर बंद करने के ताला नहीं था।'

'अब? 'मैंने कहा।

'तुम अपनी का पेटी का ताला निकाल लो, उसी को बाहर लगा देंगे।'

'मेरी पेटी खुली रह जायेगी ।'

'बन्द घर के अन्दर पेटी बंद रहे खुली रहे, क्या फर्क पड़ता है।'

'पेटी में जोखिमक सामान है।'

'कुछ नहीं है।'

'सोने की अंगूठी है, आधे तोले की होगी ।'[5]

'विनोद कुमार शुक्ल को यहाँ एक मामूली क्लर्क की अतिसामान्य, स्वचालित सी लगती घरेलू जिंदगी की घटनाविहिन पर लगातार ऑख गड़ा रखना है और ऑख भी कैमरे की नहीं खुद अपनी। उन्हें उसके और उसके ही जैसे नीरस और दूसरे पात्रों के भीतर चल रहें मोनोलॉग और डायलॉग को पकड़ना है और इस तरह पकड़ना है कि वह यथातथ्यता के मरूस्थल में ही कहीं भीतर दबे हुये वास्तविक संवेदन, आत्म चेतना और वास्तविक आत्मसम्मान के स्त्रोतों की भी आहट बराबर मिलती रहें। उसे इसे मानवीय स्थितियों की मानवीयता को उसके मामूली से मामूली ब्यौरों में भी अक्षुण्ण है और साथ ही उसमें रचनात्मक संभावनाएँ भी खोजनी पानी है, ऐसी संभावनाएँ जो मनमानी और दूरारूढ़ न लगे न संदिग्ध न लगने लगे अपनी जेब से निकालकर दी अपनी संवेदना की तरह। कितना छोटा सा दायरा है इस जिंदगी का इसमें कहा गुंजाईश है – 'रस' या संघर्ष की बड़ी बातों के लिये। बस संतू बाबू और उसकी पत्नी है, टपकता हुआ एक किराये का मकान है, मकान मालिक डॉक्टर और उसकी बीबी है – दतर की घुटन भरी दुनिया है जिसमें अपने ही जैसे लाचार और हास्यास्पद साथी है और है एक कस्बे का परिवेश, जिंदगी, बदहाली, फूहड़ सम्पन्नता प्रदर्शन, रोंगटें खड़े कर देने वाले दारिद्रय और दैन्य की जीती जागती मूरतें।'[6]

निम्नमध्यवर्गीय आदमी का सामाजिक प्रतिष्ठा और संकोच उन्हें न चाहकर भी उन कामों को करने को मजबूर करते हैं, जिन्हें वह नहीं करना चाहता। संतू बाबू कहते हैं कि उन्हें समझदारी थी। इस समझदारी के कारण मैने सोच लिया था कि मैं नहीं कर सकता। समझदारी से आत्मसमर्पित जैसी मेरी स्थिति हो गई थी। अदब भलमनसाहत जो मध्यमवर्गीय जीवन का हिस्सा है, वही आदमी को डरपोक और संकोची बना देता है। यही कारण मध्यवर्गीय आदमी को बार बार अपमानित करता है और उसे विद्रोह न करने के लिये मजबूर करता है।

संतू बाबू को नौकर की कमीज पहनाना इस उपन्यास की एक ऐसी घटना है जिसके कारण संतू बाबू में संघर्ष करने का साहस आता तो प्रतीत होता है, लेकिन विद्रोह में बदलने की जगह घुटन और द्वंद्व बनकर रह जाता है। आप पाएंगे कि संतू का यह चरित्र अटपटा लगने के बावजूद समूचे नौकरीपेशा मध्यवर्ग का चरित्र है जिसकी विवशताओं के सामने स्वाभिमान जिंदगी भर बौना बना रहता है। बौनेपन के इस अनुभव की सतत् प्रतीती जैसा कि हम इस वर्ग के जीवन में पाते हैं सांकेतिक भड़ास की तरह निकलती है। उपन्यास की सांकेतिक उपलब्धि यही है कि संतू बाबू की कुण्ठा और त्रास सुनकर देवांगन बाबू और गौराहा बाबू भी संतू बाबू के साथ हो जाते हैं जो अब तक मजबूरी में, नौकरी की मजबूरी में अभाव की मजबूरी में, वे लोग भी संतू बाबू के साथ हो जाते है। संतू बाबू कहते है कि – यह आदर्श, नौकर का सांचा है। आदर्श उनके बनाये हुये हैं। इस झंझट को खत्म कर दें।'

संतू और साथीगण एक खाली मैदान में जाकर फुटबाल की तरह कमीज को उछाल–उछाल कर ये लोग उसके टुकड़े

Scanned with CamScanner

टुकड़े कर देते हैं। बाद में बड़े बाबू भी शामिल हो जाते है औद कमीज को जला देते हैं। अंततः यहाँ यह साबित हो जाती है कि एक व्यक्ति का विद्रोह उतना महत्व नहीं रखता जितना एक संगठित सजग समूह का ।

'महत्वपूर्ण बात जिन्दा आदमी की कलाई में बंधी घड़ी नही थी। मरे आदमी की कलाई में बंधी घड़ी में बंधी चलती घड़ी थी। मेरा मामला मुर्दे आदमी की चलती घड़ी का था।'

'स्पष्ट होता है कि रचनाकार वर्ग स्थिति के उस व्यामोह समझने में समर्थ है, जो सामाजिक गठन का मूलभूत ढाँचा न लाँघी जा सकने वाली सीमाओं को निर्मित करता है। मध्यवर्गीय जीवन के चौखटे के भीतर जिस नई संस्कार शीलता का जन्म होता है, वह दतरी संस्थानक व्यवस्था के भीतर ही उन हास्यापद स्थितियों का निर्माण करती है जहाँ 'नौकर की कमीज' एक विशिष्ट चौखटे वाले अपमानित और तिरस्कृत जीवन का पर्याय बन जाती है। तृतीय श्रेणी से चतुर्थ श्रेणी से भिन्न श्रेणी का यह नौकर घर कामकाज करने वाला ऐसा निरीह प्राणी है, जो इन दोनो वर्गों के समान तिरस्कार और घटिया मनोवृत्ति का शिकार बनता है। इसके कोई मानवीय अधिकार नहीं होते और न सेंवा शर्ते होती हैं। वह पूरी तरह से आश्रयदाता साहब और उसकी पत्नी या मेम साहिबा का गुलाम होता है, जिसे किसी भी पसन्द न आने वाली आदत के कारण नौकरी से हटाया जा सकता है, तब उसके लिये बनवाई गई कमीज उसे नही दी जाती और उस आदमी की खोज प्रारंभ हो जाती है जिसे यह कमीज फीट आ जायेगी और अंततः साहब और पत्नी के निजी नौकर बनने का अवसर प्राप्त होता होगा। उपन्यास का नामकरण कहानी के इसी हिस्से पर आधारित है, और यह हिस्सा उपन्यास की समूची संघर्ष गाथा का खास भाग है, जहाँ निम्न निम्नमध्यवर्गीय मानसिकता के बेहद खौफ नाक दिखावे और मानसिक संघर्ष को चित्रित किया गया है। सामाजिक प्रतिष्ठा और सम्मान के बारे में निम्नमध्यगींय समझ की बारिकियों को व्यक्त करने वाला यह भाग उपन्यास की मूल केन्द्रीत अंतुर्वस्तु है, जहाँ इस वर्ग की चेतना न तो उस वर्गीय संघर्ष से जुड़ पाती है, जो सर्वहारा चेतना का सजग विचारधारात्मक आयाम है, और न उस यथास्थितिवाद की समर्थक बन पाती है, जिसके रहते उसके लिये अपनी मानवीय हैसियत के मुताबिक जीवन जी सकने की सहुलियत उपलब्ध नहीं हो सकती । यह दो पाटो के बीच रगड़ खाते रहने की नियति है। कथा – नायक का सम्पूर्ण संघर्ष इसी स्थिति के भीतर चलता है और उसका व्यक्तित्व परत–दर–परत घिसता जाता है। इसी घिसावट के भीतर से वह तालमेल वह तालमेल तैयार होता है, जहाँ संतू बाबू की पत्नी के बाजार से सामान खरीदने में साझेदार बन जाते है, और उनकी पत्नी मकान मालकिन की रसोई और बाजार की साथी बन जाती है। इन संबंधो के बीच उनकी उच्चस्तरीय कामनाओं की तुष्टि होती है। संतू बाबू का समूचा, व्यक्तित्व इस पूरे उपन्यास में पूरे तल्ख अनुभवों से भरा हुआ है, जो मध्यवर्गीय जीवन के बीच पैदा होने वाली व्यावहारिकता के भीतर से बाहर आते है। बड़े बाबू, देवांगन और गौराहा बाबू आपसी सरोकारों में काइयाँ दिखलाई देते है, किंतु सभी इसी क्रम के भीतर से गुजरे है, जहाँ जिंदगी ने उन्हें मजबूर बनाया है। पागल हो गये महंगू की मौत और उसके स्थान पर उसी के बेटे की नियुक्ति एक नियति है। इससे बेहतर भविष्य की कल्पना चपरासी का बेटा नहीं कर सकता।'[7]

'शेष समाज के ताने – बाने से जुड़े नौकरीपेशा एक वर्ग की यह कहानी साधनहीनता में अजीब और विचित्र हरकतें करती जिंदगी जो कहीं से बहुत निरस, सपाट, जटिल, भुतली, विडम्बनाओं, भुक्कड़, लाचार बदहवास, शून्य निरर्थक और संवेदित है – की कहानी है। विनोद कुमार जी ने इस जिंदगी की औपन्यासिकता को समझा और संभव किया है।'[8]

'नौकर की कमीज' का निम्न मध्यवर्ग का बाबू अपने दब्बूपन के प्रति चिंतित रहता है। इस सहज और सरल दिखने वाले जीवन के पीछे छिपे हुए जीवन संघर्ष की कहानी यह उपन्यास कहता है।

संदर्भः–

1– परमानन्द श्रीवास्तव, उपन्यास का पुर्नजन्म, पृ 177

2– विनोदकुमार शुक्ल, नौकर की कमीज, पृ. 83

3– विनोदकुमार शुक्ल, नौकर की कमीज, पृ. 97

4– परमानन्द श्रीवास्तव, उपन्यास का पुर्नजन्म, पृ.180

5– विनोदकुमार शुक्ल, नौकर की कमीज, पृ. 115

6– रमेश चन्द्र शाह, समकालीन हिन्दी आलोचना, पृ. 87

7–श्याम सुन्दर मिश्र आकाशवाणी 1 –15 अप्रैल 1984

8– प्रयाग शुक्ल, साप्ताहिक दिनमान 1980

■■

Scanned with CamScanner

डॉ. श्रीमती आस्था तिवारी

अनगिन से निकला तारा सृजन का

अनगिन से निकलकर एक तारा था
एक तारा अनगिन से बाहर कैसे निकला था?
अनगिन से अलग होकर
अकेला एक

विनोद कुमार शुकल की रचनाओं ने हिन्दी कथा एवं कविता को नयी पहचान दी है। गत तीन दशकों में विनोद कुमार शुकल का नाम उनकी विशिष्ट शैली विषयों के प्रति उनकी पृथक दृष्टि और संवेदना तथा कथन भंगिमा के कारण अत्यंत महत्व के साथ उभरा है। देश में ही नहीं विदेशों मे भी समकालीन भारतीय लेखक के रूप में वे चर्चित हुए हैं।

1 जनवरी 1937 को राजनंदगांव में जन्मे सरल, अन्तर्मुखी व्यक्तित्व के धनी श्री विनोदकुमार शुकल के बारे में नागबोड्स का यह कथन गौरतलब है कि उनकी बातचीत, उनका रहन-सहन, उनकी मानसिकता, उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व ही एक ठेठ मध्यवर्गीय की तस्वीर बनाते हैं। उनका लिबास एवं अंदाज भी निहायत सरल एवं स्वाभाविक है। बीसवीं शती के इस कवि का 1971 में भारत भवन मं पहचान सीरिज में छपा पहला कविता संग्रह 'लगभग जयहिंद' जब भोर के तारे सा चमकता हुआ उदित हुआ तो धारा से अलग रचनाओं की मौलिकता, भाषा और तकनीक ने साहित्य जगत को एक नवीन रचनात्मक स्फूर्ति दी है। विनोदकुमार शुक्ल समकालीन हिन्दी साहित्य के महत्वपूर्ण कवि हैं।

शुक्लजी के साहित्य के सम्बन्ध में ओम निश्चल लिखते हैं हिन्दी कविता में एक ऐसा शख्स भी है जो अपनी तरह से लिखता है। कविता और गल्प दोनों से सघन रिश्ता रखने वाले विनोदकुमार शुक्ल की कविताएँ एकबारगी देखने पर कलावादी प्रत्ययों से संसाधित जान पड़ती हैं किन्तु उनमें गहरे प्रवेश करने पर पता चलता है कि वे अमूर्तन की स्थानीयताओं से मूर्त एवं प्रयोजनीय बना देते हैं।

विनोदकुमार शुक्ल जी अपनी प्रतिबद्धता के विषय में कहते हैं कि- मैं हर उस व्यक्ति के साथ हूँ जो हाशिये पर धकेल दिया गया है। जो सभी बुनियादी सुखों और अधिकारों से वंचित है। विनोदकुमार शुक्ल का मानना है कि व्यक्ति को जानना महत्वपूर्ण नहीं होता अपितु उसकी पीड़ा आदमी और आदमी के बीच सेतु का कार्य करती है। औपचारिक सम्बन्धों से इतर किसी अनजान व्यक्ति की पीड़ा को जानना ही सच्चा जानना है। बढ़ती बेरोजगारी, साधनहीनता, निर्धनता और स्वार्थपरक रिश्तों के बीच आम आदमी तनाव और हताशा के दौर से गुजरता हुआ उस राजनीतिक समाज से भिन्न है जो इस निराश वर्ग के साथ राजनीति कर रहा है।

समाज में ईश्वर और धर्म का प्रचार और उसके नाम पर बंटवारे के बीच एक गरीब का खाली झोला केवल अनाज की दरकार रखता है ईश्वर की नहीं।

अलग इस अधिकता में /मैं अपने खाली झोले को/
और खाली करने के लिए भय से झटकारता हूँ
जैसे कुछ निराकार झर जाता है।

विनोदकुमार शुक्ल का मानना है कि व्यक्ति को जानना महत्वपूर्ण नहीं होता अपितु उसकी पीड़ा आदमी और आदमी के बीच सेतु का कार्य करती है। औपचारिक सम्बन्धों से इतर किसी अनजान व्यक्ति की पीड़ा को जानना ही सच्चा जानना है। बढ़ती बेरोजगारी, साधनहीनता, निर्धनता और स्वार्थपरक रिश्तों के बीच आम आदमी तनाव और हताशा के दौर से गुजरता हुआ उस राजनीतिक समाज से भिन्न है जो इस निराश वर्ग के साथ राजनीति कर रहा है।

शा.नवीन महाविद्यालय
बेरला,बेमेतरा

Scanned with CamScanner

आधुनिक होती जीवन शैली ने मानव को संवेदना विहीन कर दिया है उसके लिए रिश्ते बेमानी होते जा रहे हैं, किसी की मदद तो दूर की बात है निजी स्वार्थ उसे हिंसक पशु की भांति बना रहा है। ऐसे समय में कवि दस रुपए का नोट बनकर एक गरीब के झोले में पनाह पाना चाहता है।

काश मैं/दस रुपए का नोट बनकर/
उसकी झोली में पनाह पाता/
मैं अपनी ही झोली में/घुसा हुआ था।

मनुष्य के एकाकीपन की चिंता, सौहाद्र की कमी की पीड़ा, भौतिकवादी युग में गर्व में डूबे आत्मतुष्ट मनुष्यों के भीड़ में विनोदकुमार शुक्ल मनुष्यता को खोजते हैं।

कितनी कमी है /तुम ही नहीं हो केवल बंधु/सब ही
परन्तु अतिरिक्त एक बंधु नहीं।

जीवन जीने की आदत में कवि के अनुभव में प्रतिपल भविष्य और अतीत घटता है। दु:ख के बीच सुख का पल जीवन को जीने का अभ्यास कराता है। जीवन दर्शन के सूत्र को समेटे उनकी कविता जीवन के संचित कर्मों, संचित सस्कारों के फल की ओर इंगित करती है जो मृत्यु के बाद भी जीवन को बनाये रखता है।

जीवन जीने की ऐसी आदत में /जब मैं मर जाऊंगा
तब कोई कहेगा /शायद मरा नहीं /तब भी मैं मरा रहूँगा
बरसात हो रही होगी /और मैं मरने के बाद
जीवन जीने की आदत में/अपना छत्ता भूल जाऊंगा।

वर्तमान समय में काम पड़ने पर लोगों को याद करने का बनता जा रहा है लेकिन लोगों के घर जाकर मिलने को कवि अपनी अकेली इच्छा और पहली इच्छा बताता है और प्रकृति की तरह निरंतर कार्यरत लोगों से मिलने की कामना करता हुआ फुर्सत से नहीं बल्कि जरुरी काम की तरह मिलने योग्य मानता है।

जो मेरे घर कभी नहीं आएंगे
मैं उनसे मिलने उनके पास चला जाऊंगा

दुनिया में अच्छे लोगों की कमी नहीं है कविता लेखक की सकारात्मक दृष्टि की ओर इंगित करती है। कवि की दृष्टि इस स्वार्थपरक दुनिया में उम्मीद रखती है कि दुनिया अच्छे लोगों से चल रही है इसलिए कवि अपने घर नहीं बल्कि लोगों से मिलने घर-घर जाना चाहता है।

दुनिया में अच्छे लोगों की कमी नहीं है/ बार-बार यही कह रहा हूँ
और कितना समय बीत गया है / लौटकर मैं घर नहीं
घर-घर पहुँचना चाहता हूँ /और चला जाता हूँ

मनुष्य को बचा लेने की चिंता करता हुआ कवि दुनिया को खतरों से बचाने के लिए तत्पर दिखाई देता है। उसकी यही चिंता कल्पना में दुनिया और कुएँ के जगत को देखती है। एक तरफ मानवीय आशंकाओं और संघर्ष की गहराई से भरा कुआँ है तो दूसरी ओर नई मासूम पीढ़ी रूपी पौध को खतरों से बचाने की इच्छा है -

चुपचाप धीरे धीरे चला/संभलकर उठाया मैंने गोद में उसको
बस इतना में चुप रहा/ इतना धीरे चला

बाजार में आश्रित जंगल और जंगल की संस्कृति के लिए शहरी सभ्यता किस प्रकार संकट उत्पन्न करती है कोसाफल तैयार होते ही कविता इस संकटापन्न स्थिति को बयान करती है-

कोसाफल तोड़ लिया जाता है/ तो रेशम के कीड़े
बड़बड़ाना बंद कर जीवन का कार्य समाप्त हुआ में सुप्त हो जाते हैं

मनुष्यों द्वारा किये जाने वाले जंगल के दोहन व शिकार पर चिंता व्यक्त करता है कि यदि मनुष्य की यह गतिविधियां नहीं रुकी तो पृथ्वी, मनुष्य, पशु, प्रकृति आदि हमें केवल चित्र में दिखाई देंगी। सम्पूर्ण पृथ्वी और मनुष्यों को बचाने के लिए स्त्री-पुरुष के प्रेम को छुपाकर रख देना चाहिए ताकि ये धीरे-धीरे दुनिया से विलुप्त न हो जाएं -

पृथ्वी से क्या नष्ट नहीं हो गया होगा /और वह सब कुछ है
जिससे नष्ट हो जाएगी पृथ्वी, पृथ्वी शब्द
पृथ्वी चित्र, पृथ्वी घटनाएँ, पृथ्वी कहानियां
मनुष्य चित्र, मानुष कथा/ छुपाकर रख देना चाहिए
इस अमानस की आदिम गुफा में
स्त्री-पुरुष का प्रेम।

प्रकृति-पर्यावरण और सांस्कृतिक मूल्यों के प्रबल पक्षधर विनोद कुमार शुक्ल पर्यावरण, प्रकृति और संस्कृति को बचा लेना चाहते हैं। विलुप्त होते जा रहे पेड़-पौधों वन्य प्राणियों की चिंता बस में बैठे हुए रास्ते के दोनों ओर पेड़ों को देखकर करते हैं। प्रकृति के प्रति अनुराग कमरे में लगी जंगल की तस्वीर दर्शाती है।

और मैं शहरी आदमी/ प्रकृति से इस तरह अलग होता हूँ
कि पेड़ को पीछे छोड़ बस में बैठ जाता हूँ /बस में बैठे मेरी इच्छा है कि पूरे रास्ते में दोनों और पेड़ मिलते रहें
मैंने अपने कमरे में पूरे जंगल की /तस्वीर लगा रखी है।

विनोदकुमार शुक्ल उदारीकरण, औद्योगीकरण,

Scanned with CamScanner

भूमंडलीकरण और पश्चिमी सभ्यता और उपभोक्तावादी संस्कृति का अनुकरण करने वाली पीढ़ी की जीवनशैली में आये परिवर्तन से चिंतित हैं। यह समय दिशाहीन और संशयग्रस्त लगता है। ऐसे में कवि अपनी सभ्यता, परंपरा, संस्कृति और निजता में उजाले का आभास कराता हुआ उस अतीत को ढूंढता है जो इस समाज से खोता जा रहा है। प्रकृति से निकटता, पारिवारिक स्नेह और ग्राम्य संस्कृति, अपनत्व और उन पुरानी चीजों को ढूंढता है जो समाज में खोते जा रहे नैतिक मूल्यों को बचा लें। विगलित व्यवस्था, चारित्रिक ह्रास, नैतिक पतन के कुत्सित यथार्थ में कवि को पुरानी संस्कृति और रिश्तों में जीवन की ऊर्जा का बोध होता है। गद्य और काव्य दोनों ही विधाओं में समकालीन समाज और जीवन को समेटे हुए अपनी विलक्षण दृष्टि व भाषा और शिल्प के स्तर पर प्रयोगधर्मिता के लिए साहित्य में विनोद कुमार शुक्ल का योगदान अद्वितीय है।

रायपुर में मुक्तिबोध के घर जाने पर

सूरज का सोंधा भुना लालारुख कछुवा
बिंधा भिलाई की चिमनियों से
जलते-पकते कत्थई
हो जाएगा अभी आगे
राजनांदगाँव पर।

पता नहीं लापता चाँद कब उगेगा
हमारे सो जाने पर ...पर
जादुई महल मुक्तिबोध का
यह सब यूँ घट गया
मानों नीले बिच्छुओं की सुरंग से लिपट
काला साँप
भरी दोपहर
फन तान तन गया।

लो, मैं आ गया
तुम्हारी दहलीज़ पर
गौरया-सा दुबक कर
अनंत कालयात्रा की दहशत से
ठिठककर!
तुम्हारा अहसास (कई गुना आदमक़द)
वैसी ही आवभगत
मानो तुम कहीं-वहीं-यहीं हो।
लेकिन नहीं। ...पार्टनर।
पालिटिक्स अब मती पूछो
अब तुम्हारे घर बीड़ी। नहीं
मेरे पास माचिस...,

यहां एक अगरबत्ती जलती है।
दिवाकर है। गिरीश है।
सृजनकन्या उषा है।
तुम्हारे काव्य-पुरुष के इर्द-गिर्द
दर्जनों मिथकीय बुनकर जैसे
तुम्हारे जीवंत संगी-संघाती हैं।
अकेलापन नहीं है, ख़ामोशी है,
ख़ामोशी है, मुर्दापन नहीं है,
मुर्दापन नहीं, जवाँमर्दी है।
रायपुर की जेठ दोपहरी में कोई
छत्तीसगढ़ी लोकगीत नहीं है।
राजनांदगाँव में कोई भी
क्राँति गरुड़

Scanned with CamScanner

An International, Registered & Referred Monthly Journal : Hindi Literature
Research Link - 147, Vol - XV (4), June - 2016, Page No. 64-65
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2016 - 2.782

कवि संजीव बख्शी का रचना-संसार

प्रस्तुत शोधपत्र में छत्तीसगढ़ के कवि संजीव बख्शी के रचना-संसार पर विचार किया गया है। वैसे भी छत्तीसगढ़ का अपना इतिहास और सांस्कृतिक परिदृश्य समृद्ध रहा है। यहां के रचनाकारों ने यहां के आंचलिक साहित्य और जीवन को पहचान दी है। छत्तीसगढ़ी की अपनी एक अलग मिठास है और जब वह कविता और गेय रूप में आती है, तो उसका स्वाद और भिन्न हो जाता है। विवेच्य कवि का लेखन साहित्य की विभिनन विधाओं में मिलता है। उनकी कविताएँ अतीत और वर्तमान के अनुभव, स्मृतियों, ग्रामीण संस्कृति, सभ्यता और परंपरा से समृद्ध हुई हैं। संजीव बख्शी अपने समय के छत्तीसगढ़ी साहित्य में अपना स्थान अलग रखते हैं और उनका अपना योगदान है।

श्रीमती मीनाक्षी दुबे* एवं डॉ.प्रेमलता गौरे**

प्रस्तावना :

1952 मे खैरागढ मे जन्मे संजीव बख्शीजी की पारिवारिक पृष्ठभूमि साहित्यिक है, जो पदुमलाल पुन्नालाल बख्शीजी से जुड़ती है। संजीवजी की कविताओं अब तक पाँच संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं, जिनमे 'तार को आ गयी हल्की सी हँसी' 'भित्ति पर बैठे लोग, जो तितलियों के पास है', 'सफेद से कुछ ही दूरी पर पीला रहता था तथा 'मौहा झाड़ को लाइफ ट्री कहते हैं, जयदेव बघेल प्रमुख है। अभी कुछ ही दिनों पूर्व उनका उपन्यास भूलनकान्दा प्रकाशित हुआ है।

बख्शीजी की कविताओं से जुड़ना अतीत वर्तमान के अनुभव व स्मृतियों से जुड़ना है। ग्रामीण संस्कृति, सभ्यता व लोक जीवन की झाँकी उनकी कविताओं में भरी पड़ी है। गाँव के प्रति उनका रागात्मक व वैचारिक जुड़ाव उनकी कविताओं को अलग पहचान देता है–

"जब भी बचपन को/ईमानदारी से सोचता हूँ/गाँव की पगडण्डी हो जाता हूँ /कभी खेत खलिहान/तो कभी/ विलुप्त सा पूरा गाँव/ जो अब शहर हो गया है।" (1)

बदलते समय ने बहुत कुछ बदल दिया व्यक्ति की सोच बदली, व्यक्तित्व बदल गया। फिर भी हमारे ग्रामीण अंचल ने अपनी आत्मीयता, विश्वास व पहचान को बचाए रखा है।

"यह खैरागढ है/यह जितना कट चाय और डबल पान के लिए/जाना जाता है, उतना ही इसे/उधारी के लिए जानते हैं लोग/थोड़ा कान देकर सुनिए तो बताता हूँ/यहाँ सिनेमा भी लोग उधारी में देखते हैं।" (2)

संजीव बख्शीजी प्रयोगधर्मी प्रतिबद्ध कवि हैं, जो समकालीन मुददों को उदघाटित करने के लिए तत्पर है, उनके काव्य संग्रह में युगीन चेतनाओं, मान्यताओं और समस्याओं का सजग प्रतिनिधित्व मिलता है। उनके काव्य में सामाजिक जीवन के, लक्ष्यों का निरूपण है। विचारों के सौंदर्य की झलक है। कल, आज और कल की सभ्यता और संस्कृति का मधुर संस्कार है। उनकी कविताओं में कलात्मकता के साथ–साथ भाषिक संरचना सटीक है। अपनी कविता के माध्यम से वे जो तथ्य समझाना चाहते हैं। वह पाठकों के मन–मस्तिष्क में स्पष्ट अंकित हो जाता है। इस बात का विशेष ध्यान रखा है कि उनकी कविताएँ बोझिल ना लगे।

"गाँव भर की मोटियारिने/घोटुल को लीपती है,/ लीपती है, अपने भविष्य। अपने सपने/ गाती है रीलो, रेला, हुलकी, लीपते, लीपते/फिर सजती मोटियारिनें/संवारती है घोटुल को/ सजते है मांदर। बजते है ढोल/नाच उठते है सब साथ–साथ/कचसाड़। कोकरेंग/पहर बाद। रातभर।" (3)

उनकी कविता की भाषा दैनिक जीवन के अनुभवों से खोजी गई हैं, जिसमें यथार्थ पूर्ण रूप से परिलक्षित होता है।

"इस रूके हुए दृश्य में और सच में/थोड़ा अंतर है/यथार्थ में रूका हुआ दृश्य/एक रूक गया दृश्य था/जिसके साथ लिखा हुआ था एक आग्रह/जरूरी है जितनी मिठास जीवन में/पहले उसे अपने कंधे पर देनी है जगह" (4)

संजीव बख्शी की कविताएँ किसी विचारधारा की आड़ ना लेकर वस्तुगत सच्चाई को मानवीय दृष्टिकोण से देखती हैं। उनकी कविताओं में अपने समय का यथार्थ होते हुए भी यथार्थ का भारीपन नहीं है।

"हम एक मकान देख रहे हैं/पूरा परिवार साथ है/पत्नी और दो बच्चों का परिवार/जैसे खरीद रहे है पूरा मकान पास–पड़ोस /सिर्फ महीने के किराए पर/मकान चाहिए।" (5)

संजीव बख्शी की कविताओं में गतिषील जीवन का बिम्ब है जो सरल और सहज शिल्प की है। सच और ईमानदारी उनकी कविता का उत्स है :

दोष सिद्ध करने में हम माहिर हैं ही।/कभी आसमान को/कभी सूरज को दोष देते हैं/आसमान और सूरज!

*शोधार्थी, शासकीय वि.या.ता.विज्ञान महाविद्यालय, बेरला (छत्तीसगढ़)
**प्राचार्या, शासकीय नवीन महाविद्यालय, दुर्ग (छत्तीसगढ़)

Scanned with CamScanner

जबकि /बताते हैं हमें कि/हम कब से अपनी जमीन छोड़ चुके हैं।/मैं चाहूँ भी तो अकेले नहीं जा सकता असली जमीन/क्योंकि जमीन/एक टुकड़े का नाम नहीं/और मैं अकेला/कोई इकाई नहीं।[6]

संजीव बख्शीजी की कविताओं में एक विशेष कलात्मकता है, वे अपनी कविताओं में बाह्य आडम्बर, यांत्रिकता एवं फैशन, छल-कपट से कोसों दूर रहकर लोकप्रियता के रास्तों पर चलने से परहेज करते हैं। उन्होंने कविताओं में अपने यथार्थ को सादगी पूर्ण ढंग से रखा है।

'लगता है/नींद कुछ और अधिक/गहरी हो गई है/चिकोटी से नहीं होगा/समाप्त/कियो कलयुगी/धमाके का इंतजार है/शायद, तब खुलेगी नींद/और होगा यथार्थ बोध।[7]

बख्शीजी अपनी भावनाओं को सरल एवं सहज भाषा में व्यक्त करने की अद्भुत क्षमता रखते हैं, ग्रामीण मासूमियत उनके व्यक्तित्व व रचना में एकाकार हो उठते हैं --

'शहरी क्या जाने/जंगल में होता है भूलन कांदा/पड़ गया पैर भूलन पर/नहीं दिखता फिर/घर जाने का रास्ता/दिखता है सब ओर जंगल ही जंगल/तब अक्सर गरवा चरवाहा अंगुली पकड़ दिखाता है रास्ता/कहता है संपत और जोर से हंसता है/यहां कहां गरवा चरवाहा।'[8]

कथ्य का नयापन उन्हें महत्वपूर्ण बनाता है। आम जन केन्द्रित विषयों समकालीन यथार्थ, पर्यावरण और संस्कृति जैसे विषयों पर लिखी गई उनकी कविताएँ महत्वपूर्ण हैं :

'मैं खोलता हूँ दरवाजा/क्योंकि/ऐसा करके/मैं रोज/नई संभावनाओं को खोलता हूँ/क्योंकि/रोज एक हवा का झोंका/और एक गौरैया/इसके खोलने का/इंतजार करती है'[9]

संजीव बख्शी जी की कविताओं में कई जगह पर छत्तीसगढ़ी के शब्द आए हैं, जिसके कारण उनकी भाषा में आंचलिकता का प्रभाव का परिलक्षित होता है।

"गांव से दूर/सड़क से दूर/लेका-लेकी के नाम/एक खोली। एक आंगन/वह नहीं सिर्फ एक खोली/या आंगन/लेका-लेकी के उम्र बढ़ने की खबर है यह।"[10]

कविताओं में आधुनिकता के विविध स्वरूप, रस, एहसास तथा निज अनुभव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। उनकी कविताओं में सामाजिक विषय उभरते हैं और अधिकांश कविताएँ छोटी व सटीक हैं।

'छुट्टी हुई है स्कूल की/बिखर रही हैं लड़कियाँ/झक सफेद ड्रेस में लड़कियाँ/कहां से जाएंगी पहाड़ पार?/यह जो सफेदी है स्कूल के पास/फैल जाएगा पहाड़ पर/उजला हो जाएगा पहाड़। बिखर गई लड़कियाँ/गायब हो गई लड़कियाँ/ कहां गई सफेदी।"[11]

बख्शीजी की कविताओं में शिल्प, कथ्य, भाषा का परिपक्व रूप है। उनकी कविताओं के भीतर भाषा की कृत्रिम तोड़फोड़ नहीं है। उनकी कविताओं में जो कुछ भी है, नैसर्गिक है। कथा शिल्प और वस्तु की यही सरलता उन्हें अपने समकालीन कवियों से अलग करती है। उनकी कविताएँ बदलते समाज, सामाजिक समस्याओं, समकालीन यथार्थ उनकी चुनौतियों एवं संघर्षों को बड़ी निर्भीकता के साथ प्रस्तुत करती हैं :

'उद्योग न हुआ/क्रोकोडाईल हो गया/सबको लील जाएगा/खखारता है बुजुर्ग/खांसता है/चमचमाती कार आती है/लाल-पीली बत्तियां/आ गया/आ गया/बच्चे चिल्लाते हैं।"[12]

संजीव बख्शी की कविताएँ भिन्न संवेगों के साथ प्रस्तुत होती है, यहाँ सरलता है, कोमलता है, व्यवस्था की पड़ताल है और संवेदना का गहरा अहसास भी। 'तार को आ गई हल्की सी हँसी' कविता संग्रह की कविता "अबोध' की ये पंक्तियां इस भाव को स्पष्ट रूप से परिलक्षित करती हैं।

'एक मां बच्चे को डांट रही है/कमीना, बदजात सुअर का बच्चा/और न जाने क्या क्या कह रही है/जैसे वह इन शब्दों का अर्थ, नहीं जानती/दूसरी ओर वह अबोध बच्चा/हर शब्द को ध्यान से सुनता है/और फिर जोरों से रोता है/जैसे वह इनके अर्थ भली भांति जानता है। यह केवल एक दृश्य नहीं सामाजिक तर्क है/बताइए आश्वासनों पर ताली बजाती जनता/और इस अबोध बच्चे में क्या फर्क है।'[13]

संजीव बख्शी की कविताएँ खास जनपद की प्रतिनिधि कविताएं है। इस जनपद के जन-गण के सुख-दुख आशा-निराशा संघर्ष और स्वप्न को अपनी अंतर्वस्तु में रखती हैं। अर्थात् इनकी जन-जन के लोगों की सुख-हर्ष-उल्लास दुख, चेतना दुविधा, सपनों का सफल, तानाबाना बुनने में सफल प्रतीत हैं। सहज शब्दों के प्रयोग से ही उनकी कविता में चमत्कार उत्पन्न हो जाता है।[14]

छत्तीसगढ़ और बस्तर के दृश्य-चित्र और प्रतिध्वनियाँ उनकी कविताओं में प्रतिबिम्बित और प्रतिध्वनित हैं। श्रमिक, कृषक और भोले-भाले आदिवासी इन कविताओं में अपने-अपने पूरे दृश्य परिदृश्य के साथ उपस्थित हैं। हिन्दी काव्य के क्षितिज पर बड़ी विनम्रता व सहजता के साथ अपनी उपस्थिति दर्ज कराते हुए रचनात्मकता संघर्ष जारी रखे संजीव बख्शी काव्यात्मक प्रवृत्तियाँ, काव्य चरित्रों के आत्म संघर्ष व जनपदीय चेतना के साथ-साथ वैश्विक परिदृश्यों, गतिविधियों के प्रति सजग दृष्टि रखते हुए भविष्य की आहट को सुनने समझने की कवियोचित ललक का प्रतिफलन है।

<u>संदर्भ :</u>

(1) बख्शी, संजीव (1999) : भित्ती पर बैठे लोग, शताक्षी प्रकाशन, पृ. 82. (2) बख्शी, संजीव (2009) : सफेद से कुछ ही दूरी पर पीला रहता था, मेधा बुक्स, पृ. 97. (3) बख्शी, संजीव (1999) : भित्ती पर बैठे लोग, शताक्षी प्रकाशन, पृ. 22. (4) बख्शी, संजीव (1999) : सफेद से कुछ ही दूरी पर पीला रहता था, मेधा बुक्स, पृ. 34. (5) वही, पृ. 91. (6) बख्शी, संजीव (1999) : भित्ती पर बैठे लोग, शताक्षी प्रकाशन, पृ. 05. (7) बख्शी, संजीव (1994) : तार को आ गयी हल्की सी हँसी, पड़ाव प्रकाशन, पृ. 29. (8) बख्शी, संजीव (2004) : जो तितलियों के पास है, मेधा बुक्स, पृ. 08. (9) बख्शी, संजीव (1994) : तार को आ गयी हल्की सी हँसी, पड़ाव प्रकाशन, पृ. 49. (10) बख्शी, संजीव (1999) : भित्ती पर बैठे लोग, शताक्षी प्रकाशन, पृ. 22. (11) बख्शी, संजीव (2004) : जो तितलियों के पास है, मेधा बुक्स, पृ. 58. (12) वही, पृ. 63. (13) बख्शी, संजीव (1994) : तार को आ गयी हल्की सी हँसी, पड़ाव प्रकाशन, पृ. 05. (14) बख्शी, संजीव (1999) : भित्ती पर बैठे लोग, शताक्षी प्रकाशन, कवर से।

Scanned with CamScanner

COPY RIGHT TRANSFER APPROVAL FORM

(Clause 14e of the Ordinance - 45)

Name of Candidate	:	Smt. Meenaxi Dubey
Department	:	Hindi
Degree	:	Ph.D.
University	:	Pt. Ravishankar Shukla University, Raipur (C.G.)
Supervisor	:	डॉ. प्रेमलता गौरे प्राचार्य शासकीय नवीन महाविद्यालय–बेरला, जिला–बेमेतरा (छ.ग.)
Thesis Title	:	'खैरागढ़ की साहित्यिक परम्परा और संजीव बख्शी'
Year of Award	:	2017

Agreement

1. I hereby declare that, If appropriate, I have obtained and attached here to a written permission/statement from the owner(s) of each third party copyrighted matter to be included in my thesis/dissertation, allowing distribution as specified below.
2. I hereby grant to the university and its agents the non-exclusive license to archive and make accessible, under the condition specified below, my thesis/dissertation, in whole or in part in all forms of media, now or hereafter known. I retain all other ownership rights to the copyright of the thesis/dissertation. I and my Supervisor also retain the right to use in future works (such as articles or books) all or part of this thesis, dissertation, or project report.

Condition :

1. Release the entire work for access worldwide

P. Gaure

Meenaxi Dubey

Signature of the Candidate

Signature and seal of

The Supervisor

शास. नवीन महाविद्यालय

बेरला, जिला – बेमेतरा (छ.ग.)

Place

Date

Scanned with CamScanner

Since March 2002
15th Year of Journey...
Creating History
Countdown Started
for Issue No

150

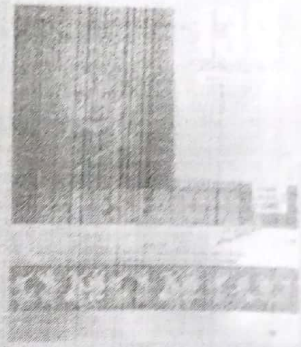

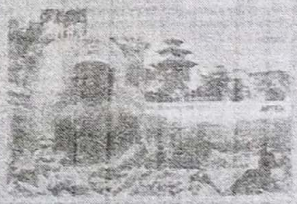

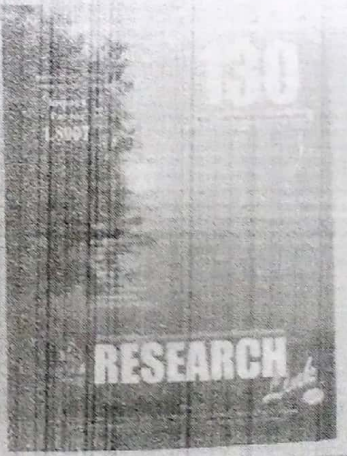

Scanned with CamScanner

[illegible] कमली।
[illegible] की हरियाली [illegible]
[illegible] सुख [illegible]
[illegible] वाद [illegible] किये।
[illegible] की धूने [illegible] पड़ी।
[illegible] कल अरती गाती [illegible] बाली [illegible]।।
इसके भाषा में [illegible] राज-महराज।[5]

इस प्रकार इस [illegible] सहीं जीवन [illegible] सेनापति [illegible] है कि [illegible] लोक जीवन [illegible] प्रकार भाव व [illegible] का अटूट [illegible] और [illegible] को साथ [illegible] प्रकृति वर्णन में [illegible] अलंकरण की भांति [illegible] को मिलता है।

किनारे झील [illegible] के
लगते हैं कोल [illegible]
जागती सुब [illegible] शान है,
लहरों के [illegible] नाम है?
दूर पर्वत [illegible] हुए चील से।[6]

इन पंक्तियों [illegible] सम्मुमित का चित्र [illegible] है। हरे-भरे [illegible] लगता है। उसके दिल को सुकून मिलता [illegible] प्रकृति की अनुपम देन है –

आँखों में [illegible] धान की ये फसलें,
दिलो में [illegible] धान की ये फसलें।

खेत-खार [illegible] जीवन है रस भरा,
मुर्दों में [illegible] है धान की ये फसलें।[8]

इन पंक्तियों [illegible] के माध्यम से जीवन तत्व को नई परिभाषा दी है। [illegible] का बहुत ही महत्व है। पेड़ नहीं होंगे, तो हम [illegible] से मिलेगा? मनुष्य आज स्वार्थ में अंधा होकर [illegible] कर रहा है। यह भी भूल गया है कि [illegible] को काट रहा है और भावी पीढ़ी को अमृत [illegible] रहा है। ऐसे ही भाव कविता [illegible] देखने को मिलते हैं।

पेड़ों को काट [illegible] प्यार दें।
भावी को [illegible] जीवन को श्रृंगार दें।।[9]

इस प्रकार [illegible] संरक्षण की महत्ता को [illegible] हुए भविष्य [illegible] का प्रयास [illegible] का प्रयास किया [illegible] धरती का मांग सवारना प्रकृति [illegible] शुभ दान। ऋतुराज बसंत का आगमन [illegible]

सुकोमल [illegible] मधुरवा पुष्प निखार
आबाद हुई प्रकृति [illegible] बसंत बहार।[10]

अर्थात [illegible] जीवन का मूर्त रूप देने का प्रयास [illegible] धरती माता के [illegible] एक [illegible] संसार की [illegible] परिपूरित [illegible] में भी [illegible] रचनाकार [illegible] प्रकृति चित्रण के माध्यम से [illegible] करते हुए [illegible]

है।

काँटों ने, उजाड़ दिया, फूलों का देश।[11]

इन पंक्तियों में यादवजी ने प्रतीकों के माध्यम से [illegible] की विसंगतियों को उजागर किया है। प्रकृति चित्रण में यादवजी सिद्धहस्त दिखाई देते हैं। हालावादी काव्य (हरिवंशराय बच्चन) से साम्य रखते हुए मस्ती से परिपूर्ण ये पंक्तियाँ उनके कृतित्व को एक नया आयाम देती हैं

हठात चुम रहे फूलों को, बेदर्द अवारे भृंग।
मस्ती भरे गीत गाता, विहंस रहा निकुंज।।[12]

यहाँ उपवन भी मस्ती में हंस – गा रहा है। पेड़ों के संवाद के माध्यम से प्रकृति वर्णन करते हुए यादवजी इस प्रकार शब्द संयोजन करते हैं –

अदे गोठियावत हे, मउहा संग परसा।
नई बाँचिस चरागन, नई बाँचिस धरसा।।[13]

अर्थात् मनुष्य की निकृष्टता इतनी बढ़ गई है, [illegible] इतना हो चुका है कि पेड़ों का भी जीना दूभर [illegible] आपस में इस विभीषिका पर चिंतित हैं। डॉ. यादवजी [illegible] लेखनी का इससे सुन्दर प्रमाण और क्या [illegible] प्रकृति को सिर्फ देखता, निहारता ही नहीं, बल्कि [illegible] के कारण उससे बातें भी करना चाहता है। टेसू के पौधे से बातचीत व जीवन दर्शन उनकी इस कविता में देखने को मिलता है –

आ गले मिलें, बातें करें, तपन बुझायें तन-मन की।
पास आकर सुना दास्ता, अपने परदेशी जीवन की।[14]

अर्थात् मानव में मानव के प्रति संवेदना समाप्त हो गई है। तब मनुष्य प्रकृति की गोद में जाकर अपनी गुहार लगाता है। उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि डॉ. यादवजी प्रकृति के कुशल चितेरे हैं। प्रकृति के रमणिक चित्रांकन में यादवजी की कलात्मक लेखनी का प्रमाण मिलता है। निष्कर्षतः कहा जाता है कि वे प्रकृति वर्णन में सिद्धहस्त व सफल हैं। उनकी कलम तूलिका का जादू खूब चला है।

संदर्भ :

(1) अग्रवाल, महावीर (सं.) (1980). [illegible] परिप्रेक्ष्य, श्री प्रकाशन, दुर्ग, पृ. 248. (2) यादव, पीसीलाल (2010) [illegible] के कोरा, : दूध मोंगरा, गण्डई, पृ. 31. (3) वही। (4) यादव, पीसीलाल (2009). कुकडूँ कूँ मुर्गा बोला : दूध मोंगरा, गण्डई, पृ. 08. (5) यादव, पीसीलाल (2010). दिन आये फूलों के, दूध मोंगरा, गण्डई, पृ. 08. (6) यादव, पीसीलाल (2009). कुकडूँ कूँ मुर्गा बोला, दूध मोंगरा, गण्डई पृ. 08. (7) यादव, पीसीलाल (2012). शब्दों का बंदनवार, वैभव प्रकाशन, गण्डई, पृ. 09. (8) वही, पृ. 55. (9) वही, पृ. 64. (10) होली अंक, छत्तीसगढ़ युग, 1973, में प्रकाशित यादव जी की कविता। (11) महाकोशल, रायपुर 28-08-1973 में प्रकाशित यादवजी की संदेश नामक कविता से। (12) दैनिक देशबन्धु, रायपुर, नवप्रभात शीर्षक से-07-05-1975. (13) यादव, पीसीलाल (2012). काम बर उरा परसाद बर पूरा, वैभव प्रकाशन, रायपुर, पृ. 27. (14) सवेरा-संकेत, राजनांदगाँव 7-08-1976 में प्रकाशित टेसू के प्रति कविता से।

❖❖

Scanned with CamScanner

डा. पी[illegible]लाल [illegible] के काव्य में प्रकृति अनुराग

[illegible] के काव्य में प्रकृति अनुराग पर विचार किया गया है। [illegible] कवियों के आकर्षण का केन्द्र रही है। [illegible] हमारी संस्कृति की निधि है। [illegible] शैली में आया है। [illegible] विशेषताओं में है [illegible] ये रही है। [illegible] रूप में हुआ है।

[illegible]

[illegible] हो जाता है। वस्तुतः यह कविता नहीं, कहानी [illegible] कविता का रूप देकर [illegible] याद रखते हैं।

> पानी न बरसा तो हम मर जायेंगे,
> [illegible] पर छोड़कर, हम कहाँ जायेंगे।

इन पंक्तियों के माध्यम से कवि ने "जहाँ न पहुँचे [illegible]" कहावत को चरितार्थ किया है। [illegible] परिस्थिति से [illegible] होता है। [illegible] प्रकृति का [illegible] चित्रण [illegible] है।

> दौड़–दौड़कर बादल आए, गरज–गरज [illegible]
> [illegible] नदियाँ उछलीं, इठलाई [illegible]
> मेंढक बोले झिंगुर गाए।
> दौड़–दौड़कर बादल आए।
> सर–सर–सर–सर चली हवा,
> पेड़ पौधों को मिली दवा।

[illegible] बादल का दौड़ना, गरजना, [illegible] मछलियों का इठलाना, मेंढकों का बोलना [illegible] वर्षा ऋतु का सुन्दर चित्र खींचा है। [illegible] आसमान में जब काले काले मेघ घिर आते हैं [illegible] बादल गरजने लगते हैं, तब मोर नाच [illegible] यह दृश्य बड़ा ही मोहक [illegible] सुन्दर ढंग से [illegible]

> [illegible] मयूर [illegible]
> [illegible] मगन हो जायें।

[illegible] विश्वविद्यालय, दुर्ग (छत्तीसगढ़)
[illegible] बेमेतरा (छत्तीसगढ़)

था। व्यवस्था तथा शासक तंत्र की आवश्यकतानुसार नारी पर धार्मिक और नैतिक मानदण्डों का शिकंजा कसता रहा या ढीला होता रहा। धर्म/नौतिकता मानदण्डों का शिकंजा कसता रहा या ढीला होता रहा। धर्म/नैतिकता/स्वर्ग की आड में चलाये गये इस दमन चक्र से स्त्री पर पूर्ण मनोवैज्ञानिक नियंत्रण हर काल और हर समाज में रहा। स्त्री—योनि को पापों का फल और पापों के प्रायश्चित के लिए धर्म के सुझाये मार्ग पर चलना आवश्यक माना गया। स्त्री—विरोधी धर्म और नैतिक मापदण्डों के विरोध का अर्थ अपने ऊपर पाप चढ़ाना था। अत: धार्मिक और सामाजिक सुधारकों के अलावा स्त्री विरोधी धार्मिक मान्याताओं के विरूद्ध आमतौर पर आवाज नहीं उठी।

यह एक ऐतिहासिक सत्य है कि नारी के उदर से जन्म लेकर भी पुरूष उसके प्रति पूर्ण निष्ठावान नहीं रहा ''आज उसी नारी देह का विज्ञापन और व्यवसायीकरण धड़ल्ले से हो रहा है। नाचने, अंग—अंग की भंगिमाएँ दिखाने, मुद्राओं से, स्पर्श से, यौवन के उभार से, जरूरी हो तो सहवास के समाज में कई भयंकर विकृतियाँ द्रुतगति से उभरकर सामने आ रही है''७

इस विषय पर उत्कंठा रखने वाले नागरिक नारी को उसके जीवन से जुड़ी समस्याओं से निजात दिलवाने में सहयोग प्रदान करें।

संदर्भ ग्रंथ सूची

१. आखयायन महिला विवशता का — हरिश्चन्द्र व्याय, पृ०—७

२. नारीवादी राजनीति संघर्ष एवं मुददे — साधना आर्य, निवेदिता मेनन

३. स्वलिखित — डा० सारिका त्यागी

४. आजाद औरत कितनी आजाद — शैलेन्द्र सागर, रजनी गुप्त, पृ०—६५

५. स्त्री विमर्श — चुनौतियाँ और संभावनाएँ — अनामिका — पृ०—१०२

६. कविता — कैनेडियन कवियत्री — मासी रेंडन

७. आख्यायन महिला विवशता का — हरिश्चंद्र व्याय — पृष्ठ—७

40

सुशासन और महापौर की भूमिका

डॉ. मालती तिवारी
निर्देशिका,
शास. महाप्रभु वल्लभाचार्य स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महासमुंद (छ.ग.)

डॉ. सुभाष चन्द्राकर
सह—निर्देशक,
दुर्गा महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

प्रीतिबाला
शोधार्थी,
दुर्गा महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

संक्षेपिका — लोकतंत्र को मजबूत व सफल बनाने के लिए प्रशासन में 'सुशासन' का होना अति आवश्यक है। प्रशासनिक कार्यों का ढाँचा इस प्रकार हो कि जनता की सहभागिता उसमें बने रहे। क्योंकि प्रशासन व्यवस्था ही देश की आर्थिक, राजनीतिक व सामाजिक गतिविधियों को संचालित करने का उत्तरदायित्व निभाती है। प्रशासन में विकेन्द्रीयकरण व्यवस्था लागू हो जाने पर 'सुशासन' का विकास होने लगा है। इसी विकेन्द्रीयकरण व्यवस्था के तहत स्थानीय निकायों का प्रभुत्व कायम हो पाया है। स्थानीय संस्थाएं ग्रामीण व नगरीय क्षेत्रों में भली—भांति फलीभूत हो रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों की प्रशासनिक व्यवस्था प्राचीन काल से ही व्यवस्थित थी नगरों की संरचना व प्रशासनिक व्यवस्था का विकास बाद में हुआ परन्तु नगरीय संस्था का स्वरूप समय के साथ परिवर्तित हो गया। ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा सही ढंग से संचालित हो सके इसलिए नगर का प्रमुख अर्थात 'महापौर' को संविधान द्वारा शक्तियां प्राप्त हो जाने से नगरीय प्रशासन का स्वरूप

Scanned with CamScanner

परिवर्तित हो गया है। महापौर नगरीय राजनीति व प्रशासनिक व्यवस्था में 'सुशासन' स्थापित कर धरातलीय लोकतंत्र को सबल बनाने में राष्ट्र का योगदान दे रहें है। अतः नगरीय शासन में 'सुशासन' को समाहित करने में महापौर की प्रमुख भूमिका होती है।

प्रशासन एक ऐसी व्यवस्था है जिसके अन्तर्गत किसी भी राष्ट्र के सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक विकास के दायित्वों का निर्वहन किया जाता है। प्रशासनिक कार्यों का सम्पादन लोककल्याण के हितों को ध्यान में रखकर किया जाता है जिसमें समाज के सभी वर्गों के लोगों का सर्वांगीण विकास हो सके। साथ ही प्रशासन में उन गुणों का समावेश किया जाना आवश्यक है जो प्रशासनिक गतिविधियों में वैचारिकता व व्यवहारिकता का समन्वय कर सके। लोकतंत्र को सबल व मजबूत बनाने के लिए प्रशासन में सु–शासन व्यवस्था का समावेश होना जरूरी है। प्रशासन में सु–शासन व्यवस्था तभी आ सकती है जब शक्तियों का विकेन्द्रीयकरण किया जाए। विकेन्द्रीयकरण शासन प्रणाली स्थापित हो जाने पर प्रशासन की गतिविधि को एक नया आयाम मिलता है और उसमें निरन्तरता बनी रहती है। स्थानीय स्तर पर लोगों को शासन प्रक्रिया में भाग लेने का अवसर भी मिल जाता है। वे राजनीति से जुड़ने लगते हैं साथ ही क्षेत्रीयता के प्रति उत्तरदायित्व व सामूहिक एकता की भावना का विकास होता है। शासन व्यवस्था भी हर स्तर पर सही व उत्तम ढंग से संचालित हो सके इसलिए सुशासन शब्द का प्रयोग किया जाता है। सुशासन को स्थानीय शासन की संज्ञा भी दी जाती है। स्थानीय विशेष के लोग शासन व्यवस्था में शामिल होकर एक सच्चे लोकतंत्र का परिचय देते है।

सु–शासन व्यवस्था का गठन लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की मौलिक विशेषता का परिणाम हैं जिसमें स्थानीय विशेष की कार्य प्रणाली का सम्पादन करने के लिए लोग बारी–बारी से शासन प्रक्रिया में भाग लेते हैं। अपने क्षेत्र से संबंधित समस्याओं के निवारण व आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए शासन व्यवस्था को प्रभावित करने का कार्य करते हैं। वर्तमान में स्थानीय शासन व्यवस्था का महत्व अत्यधिक बढ़ गया है लोगों में स्थानीय विशेष व राजनीति के प्रति सजगता आ गई है। लोग राजनीतिक गतिविधियों से संबंधित क्रिया–कलापों में बढ़–चढ़ कर हिस्सा लेते है अपने क्षेत्र के प्रति एक लगाव उत्पन्न हो जाने के कारण लोगों में शासन को संचालित करने की भावना जागृत हो गई है। प्रशासन के हर स्तर पर सुशासन तभी प्रवाहित हो सकती है जब लोग शासन प्रक्रिया में भाग लेकर शासन का सहयोग करते हैं। इससे शासन व जनता दोनों ही एक दूसरे से रूबरू होते हैं। साथ ही प्रशासन के हर स्तर पर विकास कार्यों के लिए दिशा मिलती है। स्थानीय निकायों की बात की जाए तो नगरीय शासन का संचालन महापौर द्वारा किया जाता है जिसे नगर का प्रथम नागरिक भी कहा जाता है। महापौर का चुनाव नगरीय निकाय की जनता द्वारा प्रत्यक्ष निर्वाचन प्रणाली द्वारा किया जाता है। जो सुशासन व्यवस्था की एक इकाई के रूप में उस स्थान विशेष में कार्यों का सम्पादन करता है। महापौर का उत्तरदायित्व है कि वह नगरीय व्यवस्था का संचालन सही ढंग से करे।

नगरीय नियोजन का कार्य संचालन महापौर द्वारा किया जाता है। जो निम्नलिखित है:–

१. नगरीय प्रबंधन का कार्य करना।

२. उपयोगी भूमि का विनिमय तथा इमारतों का निर्माण।

३. आर्थिक व सामाजिक विकास की योजना का निर्माण करवाना।

४. परिवहन के लिए सड़कों व पुल का निर्माण करवाना साथ ही संसाधन की समुचित व्यवस्था करना।

५.नगरीय जनता के लिए चिकित्सा सुविधा, बाजार व्यवस्था, जल की व्यवस्था नालियों का निर्माण, सफाई की व्यवस्था, बिजली की व्यवस्था प्रदान करना।

६. नगर के कमजोर वर्गों की आवश्यकताओं की पूर्ति करवाना।

७. नगर में आर्थिक स्त्रोतों का निर्माण कर आर्थिक रूप से सबल बनाना।

८. गंदी बस्तियों का संवर्धन करवाना।

९. मनोरंजन के साधनों को उपलब्ध करवाना।

Scanned with CamScanner

१०. सांस्कृतिक, शैक्षणिक पहलुओं की अभिवृद्धि और शमशान गृहों का निर्माण करवाना आदि।

महापौर एक तरह से दिशा सूचक का कार्य करता है। जो नगरीय जनता की उम्मीदों को सही दिशा निर्देश करता है। राज्य सरकार द्वारा जो भी योजनाएं स्थानीय विशेष के लोगों के लिए चलाई जाती है। महापौर उन योजनाओं को नगरीय जनता तक पहुँचाने का कार्य करता है। और नगर से संबंधित मांगों को राज्य सरकार के समक्ष रखता है। एक तरह से यह सेतुबंध का कार्य करता है। नगरीय निकायों की गतिविधियों की जानकारी समय–समय पर राज्य सरकार को देता है। इससे राज्य सरकार को भी स्थानीय विशेष के विकास से संबंधित जानकारी मिलती रहती है। अतः सुशासन व्यवस्था के संचालन में महापौर अपने दायित्वों व कर्तव्यों का निर्वहन भली–भाँति करता है। जन प्रतिनिधि होने के नाते महापौर को कई समस्याओं व चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। परिस्थितियाँ कैसे भी रहे महापौर अपने कर्तव्य के प्रति अडिग रहता है। नगरीय निकायों के कार्यों के संचालन में महापौर का सहयोग प्रदान करने के लिए वार्ड प्रतिनिधि भी होते हैं जो अपने–अपने वार्डों का संचालन करते हैं। और नगर विकास के कार्यों में अपना–अपना योगदान देते हैं। सुशासन व्यवस्था में न्याय व्यवस्था कायम होना चाहिए इससे समाज के सभी स्त्री व पुरुषों को समान दृष्टिकोण से देखने व आगे बढ़ने का अवसर मिलता है। प्रशासन में जितना लचीलापन होगा सुशासन उतना ही सुदृढ़ व मजबूत होगा।

नगरीय निकायों में निगम अधिकारी व कर्मचारी भी अपने–अपने दायित्वों का निर्वहन करते हैं। नगर से संबंधित कार्यों की क्रियान्वित करने में सहयोग प्रदान करते हैं। ये शासन के तंत्र के रूप में प्रशासन का कार्य संचालन करते हैं। महापौर निगम अधिकारी व नगरीय जनता के बीच सामंजस्य बनाकर रखता है। नगर निगमों की संरचना अपने विकास का स्वरूप है। वर्तमान में जो नगरीय व्यवस्था क्रियान्वित हो रही है। कहीं न कहीं अपने अतीत से जुड़ी हुई है। प्राचीन काल में गांव को शासन की धुरी माना जाता था गांव ही स्थानीय स्तर पर प्रशासन का कार्यभार सम्भालते थे। ग्रामीण स्तर पर जो संस्था थी वह प्रशासन की एक इकाई के रूप में विद्यमान थी धीरे–धीरे नगरों का प्रचलन शुरू हुआ और प्रशासन के कार्यों पर दबाव बढ़ने लगा। प्रशासनिक कार्यों का सम्पादन भली–भाँति करना कठिन हो गया था। लोगों में प्रशासन व राजनीति के प्रति असंतोष, वैमनस्यता, आत्मविश्वास की कमी आदि महसूस होने लगी थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद स्थानीय निकायों की स्थिति सुधारने हेतु बहुत सी समितियों ने अपने–अपने सुझाव संसद में रखे, तब जाकर केन्द्र सरकार ने शक्तियों के वितरण प्रणाली पर ध्यान देकर स्थानीय निकायों को स्वतंत्र रूप से अपने उत्तरदायित्वों का निर्वहन करने की छुट दी, जिसका परिणाम यह था कि ७३वाँ व ७४वाँ संशोधन संविधान में किया गया।

७३वाँ संविधान संशोधन ग्रामीण क्षेत्रों के लिए ७४वाँ संवैधानिक संशोधन शहरी या नगरीय निकायों के लिए किया गया। आज ग्रामीण व शहरी निकाय अपने–अपने क्षेत्रों का निर्माण स्वतंत्रता पूर्वक कर रहे हैं। सामाजिक व राजनीतिक गतिविधियों में परिवर्तन आ गया है। शहरी क्षेत्रों मे महापौर को कुछ शक्तियां प्राप्त हो जाने से महापौर नगरीय राजनीति में शक्तिशाली हो गया है। जो प्रत्यक्ष रूप से जनता द्वारा चयनित होकर, शासन संचालन का कार्य अच्छे से निभा रहा है। चूंकि महापौर उसी क्षेत्र विशेष का होने के कारण, अपने क्षेत्र के प्रति लगाव सा उत्पन्न हो जाता है। इसी लगाव के कारण महापौर जनता व निगम अधिकारियों, पार्षदों के साथ मिलकर अपने नगर के लिए स्वेच्छा से कार्य करता है। जनता भी आत्मविश्वास के साथ अपने प्रतिनिधि का सहयोग करते हैं। अपने क्षेत्र से संबंधित समस्याओं व कार्यों को भली–भांति सुलझाने व क्रियान्वित करने का कार्य करते है। स्थानीय संस्थाओं का निर्माण राज्य सरकार की विधानसभा व द्वारा निर्मित होती है। स्थानीय निकायों के द्वारा अपने क्षेत्रों में कार्य संचालन से केन्द्र व राज्य सरकार का भार हल्का हो गया है। और सभी दिशाओं में आगे बढ़ने के लिए सभी को स्वतंत्रता प्राप्त हो गई है।

पहले महापौर का चुनाव पार्षदों द्वारा किया

Scanned with CamScanner

जाता था तब महापौर को पार्षदों की ही बात माननी पड़ती थी एक तरह से वह कठपुतली मात्र था किसी भी बात को स्वतंत्रता पूर्वक कह नहीं पाता था, किन्तु आज परिस्थितियाँ बदल गयी है। महापौर मेयर–इन–कौंसिल के सदस्यों व स्वविवेक निर्णय लेकर स्थानीय निकायों के कार्यों को करता है। जनता के विश्वास को बनाए रखा व नगर संचालन का कार्य करना महापौर का कर्तव्य है। संसद द्वारा इन स्थानीय निकायों को अधिकार प्रदान कर देने से शासन संचालन तथा शासन प्रवाह को गति मीली है और सुशासन व्यवस्था कायम होने लगी है। जनता भी शासन प्रक्रिया में भाग लेकर अपने उत्तरदायित्वों का निर्वहन कर रही है। इससे शासन पर नियंत्रण भी रहता है। सामूहिक विकास के साथ–साथ सामूहिकता को बढ़ावा भी मिलता है।

शासन प्रणाली का विकेन्द्रीकरण हो जाने से शासन में 'सुशासन' का समावेश आने लगा है। भष्टाचार, विसंगतियां धीरे–धीरे समाप्त होने लगी है। लोग प्रशासन के प्रति जागरूक हो गये है। जो लोकतंत्र को मजबूत बनाने का कार्य कर रहा है। 'सुशासन' को निरन्तर आगे बढ़ाने व उसमें लचीलेपन का समन्वय करने में स्थानीय प्रमुख महापौर की भूमिका का बहुत बड़ा योगदान है। जो निम्न से चोटी की ओर विकास में सहयोग दे रहा है। विकास की प्रक्रिया धीरे–धीरे होती है। इसमें निरन्तरता और सुशासन स्थापित करने का कार्य स्थानीय निकाय के प्रमुख का कार्य होता है, जो महापौर भली–भाँति निभा रहे हैं।

संदर्भ

१. माहेश्वरी एस.आर : भारत में स्थानीय प्रशासन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, पृ. ३५, ३६

२. अवस्थी एवं अवस्थी : भारतीय प्रशासन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा–३, पृ. ४५०

३. चोपड़ा, सरोज : स्थानीय प्रशासन, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, पृ. १०४

४. अवस्थी एवं अवस्थी : भारतीय प्रशासन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा–३, पृ. ४५०, ४५१,

५. चोपड़ा, सरोज : स्थानीय प्रशासन, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अगादमी, जयपुर, पृ. ४२, ९६, ९७, ९८, १०३, १११

६. पटनी, चन्द्रा : ग्रामीण स्थानीय प्रशासन, रिसर्च पब्लिकेशन, त्रिलोपिया बाजार, जयपुर, पृ. १५५

❑❑❑

Scanned with CamScanner

पत्रावली संख्या V-34564, पंजीकरण संख्या 533/2007-2008
आन्वीक्षिकी ISSN 0973-9777
भारतीय शोध समग्र पत्रिका (2018-19) 12 एवं 13,82-89
प्रकाशनार्थ स्वीकृत 25 अप्रैल 2018

भारत में स्थानीय स्वशासन का आरम्भ एवं विकास

प्रीतिबाला* एवं डॉ0 मालती तिवारी**

लेखक का घोषणा-पत्र

भारतीय शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी मे प्रकाशनार्थ प्रेषित *भारत में स्थानीय स्वशासन का आरम्भ एवं विकास* शीर्षक लेख/ शोध प्रपत्र की लेखक प्रीतीबाला एवं मालती तिवारी घोषणा करते हैं कि लेखक के रूप में इस लेख की सभी सामग्रियों की जिम्मेदारी लेते हैं, क्योंकि हमने इसे लिखा है और अच्छी तरह से पढ़ा है और साथ ही अपने लेख/ शोध प्रपत्र को शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशित होने की स्वीकृति देते हैं। यह लेख/ शोध प्रपत्र मूल रूप में या इसका कोई अंश कहीं और नहीं छपा है और न ही कहीं हमने इसे छपने के लिये भेजा है। यह हमारी मौलिक कृति है। हम शोध प्रपत्र आन्वीक्षिकी के सम्पादक मण्डल को अपने लेख के संशोधन एवं सम्पादन की पूर्ण अनुमति देते हैं। आन्वीक्षिकी में लेख प्रकाशित होने पर इसके कापीराइट का अधिकार सम्पादक को देते हैं।

भारत में स्थानीय शासन का इतिहास ३०० वर्ष पुराना है। मनुष्य ने जब पहली बार सामुदायिक जीवन को स्वीकारा तभी से ग्राम व्यवस्था के तहत स्थानीय शासन अभ्युदय माना जा सकता है। गांव को शासन की दूरी माने जाते थे। प्राचीन भारत की शासन पद्धति का इतिहास वैदिक काल से प्रारंभ होकर सामान्यत: की स्थापना तक फैला हुआ है। वैदिक युग में, जब नगरों का स्थान नगण्य था, ग्राम शासन का महत्व अधिक था। प्रत्येक गांव एक छोटा प्रजातंत्र सा था। गांवों में पंचायतें ग्राम–वासियों द्वारा संगठित होती थी और प्रशासकीय तथा न्यायिक कार्यो का संपादन करती थी। मनु संहिता में राजा और गांवों के बीच प्रत्यक्ष सम्बन्ध की चर्चा मिलती है कौटिल्य के अर्थशास्त्र से पता चलता है कि राज्य ग्रामीण जीवन में बहुत कम हस्तक्षेप करता था।

प्राचीन भारत में प्रशासनिक विकेंद्रीकरण का उल्लेख मिलता है। बड़े–बड़े साम्राज्य प्रांतों, जिलों, नगरों एवं ग्रामीण क्षेत्रों में विभाजित थे। भारत का वर्तमान प्रशासन अपने अतीत की प्रशासनिक व्यवस्थाओं का विकसित प्रतिरूप है। वैदिक कालीन नगरों तथा वैद्युत साहित्य में नगरों से सम्बन्धित बहुत कम जानकारी मिलती है। गुप्त काल के बाद नगरों की शासन व्यवस्था का पूर्ण विवरण प्राप्त होता है। नगर प्रशासन को संचालित करने के लिए अधिकारियों तथा कर्मचारियों का वर्णन देखने को मिलता है। इसके साथ–साथ ग्राम प्रशासन की जानकारी पर पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है शुक्र, कौटिल्य आदि ने इस सम्बन्ध में विचार व्यक्त किए हैं। वैदिक काल में राज्यों का आकार छोटा होने के कारण गांवों का महत्व अधिक था। गांव के प्रशासन का रूप प्रजातंत्र आत्मक था। गांवों के प्रशासनिक व्यवस्था में अधिकारी तथा कर्मचारी होते थे। इस प्रकार ग्रामीण प्रशासन पद्धति पर्याप्त विकसित थी। प्राचीन भारत में केंद्रीय प्रशासन से लेकर ग्रामीण प्रशासन तक की प्रशासनिक व्यवस्था देखने को मिलती है।

भारतीय प्रशासन अपने वर्तमान रूप में विरासत और निरंतरता का परिणाम है। यह भी सत्य है कि इसके विकास की कड़ियां किसी न किसी रूप में अतीत से जुड़ी हुई है, फिर भी वर्तमान शासन प्रणाली ब्रिटिश काल की देन मानी जानी

* शोध छात्रा, पं0 रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
** सहायक प्राध्यापिका, शासकीय महाप्रभु वल्लभाचार्य स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महासमुंद (छत्तीसगढ़) भारत

© लेखक २०१८-१९, एम०पी०ए०एम०सी०ओ० मुद्रण एवं आन्वीक्षिकी सदस्य सहसंयोजन से प्रकाशित, सर्वाधिकार सुरक्षित मनीषा प्रकाशन। आज्ञा हेतु कृपया सम्पर्क करें : E-mail : maneeshashukla76@rediffmail.com & ijraeditor@yahoo.in. इस प्रपत्र को www.anvikshikijournal.com पर देखें

Scanned with CamScanner

चाहिए। सुब्रमण्यम के अनुसार वर्तमान प्रशासनिक प्रक्रिया का सिलसिला सदियों तक विचारों का रहा न कि संस्थाओं का संस्थागत सिलसिला अंग्रेजों की शासन काल की देन है।

भारतीय स्थानीय स्वायत्त शासन के विकास के इतिहास को निम्न कार्यों में विभक्त किया गया है – १. प्राचीन काल में स्थानीय प्रशासन (स्व–शासन), २. मध्यकाल में स्थानीय प्रशासन (स्वशासन), ३. ब्रिटिश काल में स्थानीय प्रशासन (स्व–शास्न), ४. स्वतंत्र भारत में स्थानीय प्रशासन (स्व–शासन)

१ *प्राचीन काल में स्थानीय प्रशासन (स्व–शासन);* प्राचीन काल में विभिन्न समयों में विभिन्न प्रकार के प्रशासन प्रचलित थे। सिंधु घाटी सभ्यता काल में प्रशासन के बारे में हमारा ज्ञान अधिकतर अनुमान पर आधारित है। खुदाई में प्राप्त अवशेषों से विद्वानों ने यही निष्कर्ष निकाला है कि मोहनजोदड़ो और हड़प्पा साम्राज्य व्यवस्थित और सुशासित थे। सिंधु घाटी सभ्यता में सड़कों तथा नालियों की सुनियोजित व्यवस्था थी। इससे यह प्रतीत होता है कि नगरों में नगरपालिका आए थे, जो नगरों की समुचित व्यवस्था करती थी। सिंधु घाटी सभ्यता के संपूर्ण क्षेत्र में एक ही प्रकार के भवनों का निर्माण होता था, एक ही माप–तोल प्रचलित थी, और एक ही प्रकार की लिपि का प्रचलन था। संपूर्ण सिंधु प्रदेश में एक ही विशाल साम्राज्य संगठित था मोहनजोदड़ो की शासन व्यवस्था धर्मगुरुओं और पुरोहितों के हाथ में केंद्रित थी जो जनप्रति–निधियों के रूप में प्रशासनिक कार्य करते थे।

(i) ऋग वैदिक काल : भारतीय साहित्य में सर्वाधिक प्राचीन ग्रंथ ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद नामक चार वेद है। जिस काल में इनकी रचना हुई उसे वह। ऋग्वेद से पता चलता है कि उस समय की राजनीतिक इकाइयों के नाम 'कुल', 'ग्राम', 'विश', 'जन' और 'राष्ट्र' थे। पास–पास बसे हुए घरों के समूह 'ग्राम' कहे जाते थे। कई ग्रामों का एक ऐसा समूह जिसका एक शासक होता था, 'राजा' कहलाता था। ऋगवैदिक काल में राजनीतिक व्यवस्था की सबसे छोटी इकाई कुटुंब थी अनेक कुटुंब के समूह को ग्राम कहा जाता था। ग्राम का एक अधिकारी होता था जिसे 'ग्रामणी' कहते थे। यह ग्राम का प्रशासनिक अधिकारी होता था अनेक ग्रामों के समूह को 'विश' कहते थे। ऋगवैदिक काल में प्रचलित शासन व्यवस्था राजतंत्र थी, जिसका अध्यक्ष 'राजा' होता था। वही सुरक्षा का दायित्व लेकर ना केवल सैनिक संगठन अपितु धन संचय, शांति स्थापना और उत्तम शासन व्यवस्था करता था।

(ii) उत्तर वैदिक काल : इस युग में शक्तिशाली राजाओं का उदय हुआ। यद्यपि राजा का पद पैतृक होता था, किंतु कभी–कभी उसका भी निर्वाचन किया जाता था। शासन के संचालन में राजा प्रतिष्ठित मंत्रियों की एक परिषद् की सहायता लेता था। राजा की स्वेच्छाचारिता एवं निरंकुशता पर प्रतिबन्ध लगाने वाली संस्थाएं 'सभा' एवम् 'समिति'। स्थानीय शासन का कार्य संचालन एक विशेष मंत्री करता था। उसका मुख्य काम ग्राम और विश्व के अधिकारियों पर नियंत्रण रखना तथा उनके पारस्परिक झगड़ों का निपटारा करना था। ऋगवैदिक काल की तुलना में उत्तर वैदिक काल में राजा की सहायतार्थ प्रशासनिक अधिकारियों की संख्या में वृद्धि हुई। राज्यों के बढ़ते हुए परिणाम को देखते हुए ऐसा होना स्वभाविक ही था।

महाकाव्य काल – महाकाव्य काल में कुछ गणतंत्रों का अस्तित्व था परंतु प्रमुखता राजतंत्र ही विद्यमान थे। राजा सर्वोच्च अधिकारी होता था तथा लोक कल्याण के कार्य व प्रजा की रक्षा करना उसके प्रमुख कर्तव्य थे। सम्राट को प्रशासन में सहायता देने के लिए २ संस्थाएं मंत्रिपरिषद् व सभा होती थी। प्रशासन में सहायता देने के लिए २ संस्थाएं मंत्री–परिषद् व सभा होती थी। प्रशासन की सुविधा के लिए संपूर्ण साम्राज्य को विभिन्न इकाइयों में विभाजित किया गया था। सबसे छोटी इकाई 'ग्राम' थी।

बौद्ध साहित्य में महात्मा बुद्ध के आविर्भाव से पूर्व एवं उनके समय में 'महाजन' पदों के अस्तित्व का पता चलता है। बुद्ध के समय अनेक गणतंत्रात्मक राज्य थे; किंतु ४ राजतंत्र भी थे – मगध, अवंती, वर्ष और कौशल। बौद्ध कालीन प्रशासन की वास्तविक शक्ति 'सभा' में नहीं थी जो 'सभागार' में होती थी तथा छोटे बड़े समान रूप से उसके सदस्य होते थे। राज्य का एक अध्यक्ष होता था जिसे राजा कहते थे जिसे चुनाव के द्वारा एक निश्चित समय के लिए नियुक्त किया जाता था। इस प्रकार इस युग में राज सुपर वंशागत राजा नहीं बल्कि गण स्वभाव के प्रति उत्तरदाई व्यक्ति शासन करते थे।

Scanned with CamScanner

मौर्य शासन – मौर्य साम्राज्य प्रांतों में बटा हुआ था। प्रांत का प्रमुख प्रांत प्रांतारति कहलाता था जो राजा के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करता था। राजस्व वसूल करने, शांति व्यवस्था बनाए रखने तथा सामान्य प्रशासन के लिए साम्राज्य के उपरांत भी जिलों में बांटे गए थे जिले का एक प्रमुख अधिकारी होता था जो अंग्रेजों के समय के कलेक्टर के समान था। जिसे गांव में विभाजित थे। गांव का प्रमुख गोप कहलाता था।

राजनीति की नवीन विचारधारा का संस्थापक कौटिल्य के अनुसार राज्य एक आवश्यक और अनिवार्य संस्था है राज्य की स्थापना बिना समाज में अराजकता तथा मत्स्य–न्याय की स्थापना हो जाएगी। राज्य के सात अंग है – राजा, अमात्य, जनपद, जनपत, दुर्ग, कोषालय, सशस्त्र सेना तथा मित्र। इन ७ अंगों पर ही राज्य की व्यवस्था, स्थिरता और अस्तित्व निर्भर करता है।

स्थानीय शासन – कौटिल्य ने केन्द्रीकृत प्रशासन की श्रेष्ठता को स्वीकार किया है साथ ही व प्रशासन के विकेंद्रीकरण की बात भी करता है। भारत की प्राचीन राज्य व्यवस्था प्रजा के प्रति समुचित रुप से उधार थी प्रत्येक व्यक्ति को उनके व्यक्तित्व के विकास के लिए अधिकार दिया जाना उचित था। जनपद या नगर की अपनी स्वयं की प्रसाद की व्यवस्था होती थी। नागरिक जीवन के प्रशिक्षण कार्य स्थल का काम करते थे। ग्रामों व नगरों के लोग अपने कर्तव्यों और उत्तर–दायित्व का निर्वाह पूरी लगन से करते थे। स्थानीय समस्याओं पर चर्चा करने तथा उनका समाधान खोजने के लिए समितियां व सभाएं होती थीं।

गांव का प्रशासन उस समय भी पर्याप्त विकसित अवस्थाओं में था उसके साथ ही नगरों का स्थानीय प्रशासन भी सुचारु रुप से चलता था। मौर्य साम्राज्य की राजधानी पाटलिपुत्र का नगर–पालिका प्रशासन उन्नत दशा में था। नगर–पालिका का प्रशासन एक परिषद् द्वारा होता था। परिषद् की छः समितियाँ होती थीं जो विभिन्न विषयों के प्रशासन की सलाहकार समितियों की तरह कार्य करती थी।

चंद्रगुप्त मौर्य ने स्वायत्त शासन प्रणाली प्रचलित करके बड़ी दूरदर्शिता और जनीतिज्ञता का परिचय दिया। उसने शासन के विकेंद्री–करण की नीति अपनाएं उसने ग्रामों की व्यवस्था, कर वसूली तथा अन्य प्रशासनिक कार्यों में ग्राम उद्योग का सहयोग लिया जिससे उसके साम्राज्य में विद्रोह की आशंका नहीं रही। चंद्रगुप्त के शासनकाल में दूर–दूर के प्रांतों में भी सिचाई, भूमि के नाप, यातायात मार्गों का आदि का समुचित प्रबन्ध था।

चंद्रगुप्त मौर्य के शासनकाल में नगर कि प्रशासन व्यवस्था संतोषजनक थी। कौटिल्य के अर्थशास्त्र के अनुसार नगर का सबसे बड़ा पदाधिकारी नागरिक कहलाता था जो गोप और स्थानिकों की सहायता से नगर का प्रशासन करता था। प्रशासन का यह अंग संभवता छोटे नगरों के लिए ही था राजधानी तथा बड़े नगरों का प्रशासन दूसरे ढंग से होता था। मेगास्थनीज ने पाटलिपुत्र की व्यवस्था का विस्तृत विवरण दिया है जिससे विदित होता है कि वह एक प्रकार की म्युनिसिपल व्यवस्था थी। जिसकी आज भी म्यूनिसिपल कार्यप्रणाली से तुलना की जा सकती है। इस का कथन है कि पाटलिपुत्र का प्रशासन पांच–पांच सदस्यों की ६ समितियाँ करती थीं। इन समितियों के प्रधान पर निम्नलिखित कार्य थे :

- *पहली समिति* – औद्योगिक क्षेत्रों की देखरेख कर दी थी।
- *दूसरी समिति* – अतिथियों का प्रबन्ध करती थी।
- *तीसरी समिति* – जन्म मरण का हिसाब रखती थी।
- *चौथी समिति* – व्यापार का प्रबन्ध करती थी।
- *पांचवी समिति* – कारखानों के मालिकों पर अनुशासन रखती थी।
- *छठी समिति* – बिकी हुई वस्तुओं पर कर वसूली करती थी।

इस प्रकार संयुक्त रूप से इन क्षणों समितियों की नागरिक नगर पालिका पर सार्वजनिक भवनों की मरम्मत, बाजारों, नौका ग्रहों और मंदिरों की देख–रेख, मूल्य निर्धारण आदि का उत्तरदायित्व था।

गुप्तकालीन प्रशासन – गुप्त युग में स्थानीय शासन की रूपरेखा लगभग मौर्यकालीन ही रही। नगरों का प्रशासन नागरिक स्वयं चलाते थे और ग्राम का शासक 'ग्रामीण' कहलाता था। इसकी सहायता के लिए ग्राम पंचायत की व्यवस्था थी। गुप्त शासकों की प्रशासनिक व्यवस्था उच्च कोटि की थी और उन्होंने अपने विशाल साम्राज्य का सुचारु रूप से शासन किया।

Scanned with CamScanner

डॉक्टर अल्तेकर कहा है – गुप्तकालीन शासन प्रणाली तथा उसकी उपलब्धियों के विषय में हमारे पास विस्तृत सामग्री है जिसके आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वह केंद्र व प्रांत दोनों में अत्यंत सुव्यवस्थित थी। गुप्त राजाओं ने अपने पूर्व शासकों के शासन प्रबन्ध को अपनाते हुए उसमें कुछ आवश्यक परिवर्तन कर समय के अनुकूल बनाया। इस समय राजतंत्रात्मक शासन प्रणाली प्रचलित थी। शासन की सुविधा के लिए गुप्त साम्राज्य अन्य इकाइयों में बटा हुआ था सबसे बड़ा विभाग प्रांत था। जिसको देश या भुक्ति कहते थे। प्रांतीय शासक भूख पति कहलाते थे प्रांतों के बाद 'क्षेत्र प्रदेश' आता था इससे छोटा विभाग 'विषय' कहलाता था। शासन की सबसे छोटी इकाई 'ग्राम' था जिसका अधिकारी ग्राम एक होता था। ग्रामीणों की सहायता के लिए एक समिति होती थी जिसे 'ग्राम सभा' कहते थे। नगर का अधिकारी नगर पति कहलाता था। इस समय गांव की व्यवस्था नीचे की जाती थी व विकेंद्रीकरण व्यवस्था के तहत शहरी एवं ग्रामीण स्वशासन व्यवस्था प्रचलित थी।

राजपूत कालीन प्रशासन – राजपूत काल में ग्राम पंचायतों का महत्व घट गया। उन पर भी सामंतों की अधिकार सत्ता छा गई। ग्राम शासन में दक्षिण भारत जितना संगठित था, उतना उत्तर भारत नहीं। तत्कालीन शासन (राज्य के विशाल होने पर) प्रांतों, जीलो, अधिक स्थानों और ग्रामों में विभक्त होता था। इस दृष्टि से शासन पद्धति गुप्तकालीन शासन पद्धति के आधार पर थी पर विकेंद्रीकरण की भावना पर शासन आधारित होने के कारण केंद्रीय शक्ति को हमेशा खतरा बना रहता था। सामंतगण बहुत केंद्र से स्वतंत्र होने को सचेष्ट रहते थे।

राजपूत काल में राजा सर्वे सर्वा होता था। राजपूत वंश परंपरागत होता था। राजा को परामर्श देने के लिए एक मंत्रिमंडल होता था। एक पुरोहित भी होता था, जिसका पद मंत्री के समक्ष होता था। प्रशासन की सुविधा के लिए समितियों का निर्माण किया जाता था और उन्हें विविध कार्य सौंपे जाते थे। नगर प्रबन्ध के लिए जो अधिकारी होता था उसे उन सभी कर्तव्यों का पालन करना पड़ता था जो आधुनिक नगर–पालिका के प्रशासन करते हैं।

२. मध्यकाल मे स्थानीय प्रशासन (स्व–शासन);

१. सल्तनत कालीन शासन – सल्तनत कालीन शासन मूलतः सैनिक था और सुल्तान निरंकुश एवं स्वेच्छाचारी थे। इस काल में नगरीय एवं ग्रामीण स्व–शासन की वह स्थिति ना थी जो प्राचीन भारत में देखने को मिलती थी। नगर प्रशासन केन्द्रीकृत शासन द्वारा संचालित था, किंतु गांव अपेक्षाकृत अधिक स्वतंत्र थे।

शासन का संपूर्ण कार्य कोई शासक अकेला नहीं कर सकता था। उसे दूसरों की सहायता तथा परामर्श की आवश्यकता थी। इसलिए सुल्तानों को अपने शासन के प्रारंभ से ही अधिकारियों के एक व्यवस्थित शासन तंत्र की व्यवस्था करनी पड़ी। सल्तनत काल में सुल्तान पद सर्वोच्च तथा उसे राजनीतिक, कानूनी तथा सैनिक अधिकार प्राप्त थे। वह शासन तथा न्याय व्यवस्था के प्रति उत्तरदाई था। सुल्तान अपने पदाधिकारियों से परामर्श करता था, किंतु उनकी सलाह को मानने के लिए बाध्य नहीं था।

देश को अनेक इलाकों में बांट दिए दिया गया था और उन्हें प्रमुख सेनापतियों को सौंप दिया गया था। सुल्तानों की सहायता के लिए मंत्री होते थे जिनकी संस्था निश्चित नहीं थी। प्रशासनिक सुविधा की दृष्टि से राज्य प्रांतों में विभक्त था। प्रांत शिकों में बैठे हुए थे शिकों को सरकारों में, सरकारों को परगनों में और परगनों को ग्राम में बांटा गया था। नगर प्रशासन केंद्रीकृत नौकरशाही द्वारा संचालित था।

२. मुगलकालीन प्रशासन – मुगल शासन काल में कस्बों और नगरों में नगर–पालिका और कुशल पुलिस प्रबंधन की व्यवस्था थी। इस काल में भी ग्राम स्वायत्त शासन के सबसे महत्वपूर्ण निकाय थे। प्रत्येक मुगल प्रांत अनेक जिलों में विभक्त था। जिलों के नीचे परगना शासन इकाई कार्यरत थी। परगनों को पुनः गांवों में बांटा गया था। गांव का प्रबंध पंचायतें करती थीं। मुस्लिम शासन काल में स्थानीय संस्थाओं की स्थिति में परिवर्तन देखने को मिलता है इस साल की स्थानीय संस्थाएं प्राचीन भारत की स्थानीय संस्थाओं के समान स्वतंत्र एवं लोकतांत्रिक नहीं थी।

३. ब्रिटिश काल में स्थानीय प्रशासन (स्व–शासन); ब्रिटिश काल से पूर्व भारत में जो स्वायत्त शासन व्यवस्था थी उसे अंग्रेजों ने नष्ट कर दिया और उसके स्थान पर अपनी पद्धति के समान भारत में स्थानीय स्वायत्त शासन की व्यवस्था की। फलतः प्राचीन एवं मध्यकालीन स्थानीय शासन व्यवस्था की मौलिकता लुप्त हो गई। ब्रिटिश शासनकाल में नगरीय शासन व्यवस्था

Scanned with CamScanner

की क्रमिक इतिहास को हम चार भागों में विभक्त कर सकते है और प्रत्येक का अपना निश्चित उद्देश्य तथा प्रयोजन रहा है –(१) प्रथम काल – १६८७–१८८१, (२) द्वितीय काल – १८८२–१९१९, (३) तृतीय काल – १९२०–१९३७, (४) चतुर्थ काल – १९३८–१९४७।

(१) प्रथम काल – (१६८७ – १८८१) : ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन काल में सर्वप्रथम १६८७ में पोस्ट ऑफ डायरेक्टर्स के आदेश से मद्रास में एक नगर निगम स्थापित किया गया था। १७७३ का रेगुलेटिंग एक्ट द्वारा प्रेसिडेंसी नगरों में ''जस्टिस ऑफ पीस'' की नियुक्तियाँ की गई। १७९३ में पुन: अधिनियम को संशोधित कर स्थानीय स्व–शासन संस्थाओं को संवैधानिक आधार प्रदान किया गया। १८८० तक सरकार ने स्थानीय स्व–शासन के क्षेत्र में कई प्रयास किए। परंतु मुंबई, कोलकाता केंद्र प्रांतों एवं उत्तर–पश्चिम प्रांतों के कुछ कस्बों में ही स्थानीय सरकारें प्रभावशील रूप में कार्य कर सकी।

(२) द्वितीय काल – (१८८२ – १९१९) : १० मई १८८२ को लॉर्ड रिपन ने स्थानीय स्व–शासन के विकास के सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित किया। इस प्रस्ताव ने ही आगे चलकर 'लॉर्ड रिपन' को भारत में स्थानीय शासन के जनक के रूप में स्थापित किया। इस प्रस्ताव में पहली बार भारतीयों को स्थानीय स्व–शासन संस्थाओं में भाग लेने का अवसर दिया गया था।

(३) तृतीय काल – (१९२० – १९३७) : सन १९२० में भारतीय शासन अधिनियम –१९१९ पारित किया गया। प्रांतों में द्वैत शासन प्रणाली लागू की गई। कुछ विषय प्रांतों को हस्तांतरित किए गए स्थानीय स्व–शासन सरकारें केंद्र सरकार के नियंत्रण से मुक्त हो गई।

(४) चतुर्थ काल – (१९३८ – १९४७) : भारतीय शासन अधिनियम –१९३५ का प्रांतीय भाग–१९३५ में लागू किया गया और प्रांतों में द्वैध शासन के स्थान पर प्रांतीय स्वायत्तता शासन स्थापित किया गया। राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन ने इन दिनों व्यापक रूप धारण कर लिया था। परिणामस्वरुप स्थानीय शासन ने अपने पूर्व स्वरूप को समाप्त कर नवीन व्यवस्था अपना ली थी।

४. *स्वतंत्र भारत में स्थानीय प्रशासन (स्व–शासन);* सन १९४७ में देश की स्वतंत्रता के साथ–साथ भारत में स्थानीय शासन के इतिहास का नया युग आरंभ हुआ। ब्रिटिश शासन का अंत होते ही केंद्रीय, प्रांतीय व स्थानीय सभी स्तरों पर स्व–शासन की स्थापना हुई। यह अपने प्रकार का पहला सम्मेलन था। स्वतंत्र भारत के नए संविधान में स्थानीय स्व–शासन राज्यों का विषय बना।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् ग्रामीण स्थानीय शासन की तुलना में नगरीय प्रशासन के विकास की गति इतनी धीमी रही कि शासन के महत्व को स्वीकार किया गया। इसमें कहा गया कि प्रत्येक राज्य अपने साधनों को जुटाए और नगरों के निवासियों के लिए पहले से अच्छे जीवन की परिस्थितियों का निर्माण करें।

स्थानीय स्व–शासन संस्थाओं को सुदृढ़ता प्रदान करने के लिए तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने १९८९ में पंचायती राज एवं नगर–पालिका सम्मेलनों का आयोजन किया। ७३वाँ, ७४वाँ संविधान संशोधन विधि को लोकसभा में पेश किया गया। लेकिन बहुमत के अभाव में लोकसभा में पारित ना हो सका। १९९२ में पंचायती राज संविधान संशोधन विधेयक ७३वाँ, ७४वाँ नगर पालिका संविधान संशोधन पारित किया गया। जिससे स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं की को संवैधानिक दर्जा प्राप्त हुआ।

भारतीय संविधान द्वारा स्थानीय निकायों की शक्ति प्राप्त हो जाने के कारण नगरी विकास की राजनीति को एक नई पहचान मिली है

Scanned with CamScanner

७३वाँ एवं ७४वाँ संविधान संशोधन में स्थानीय शासन का स्वरूप इस प्रकार है

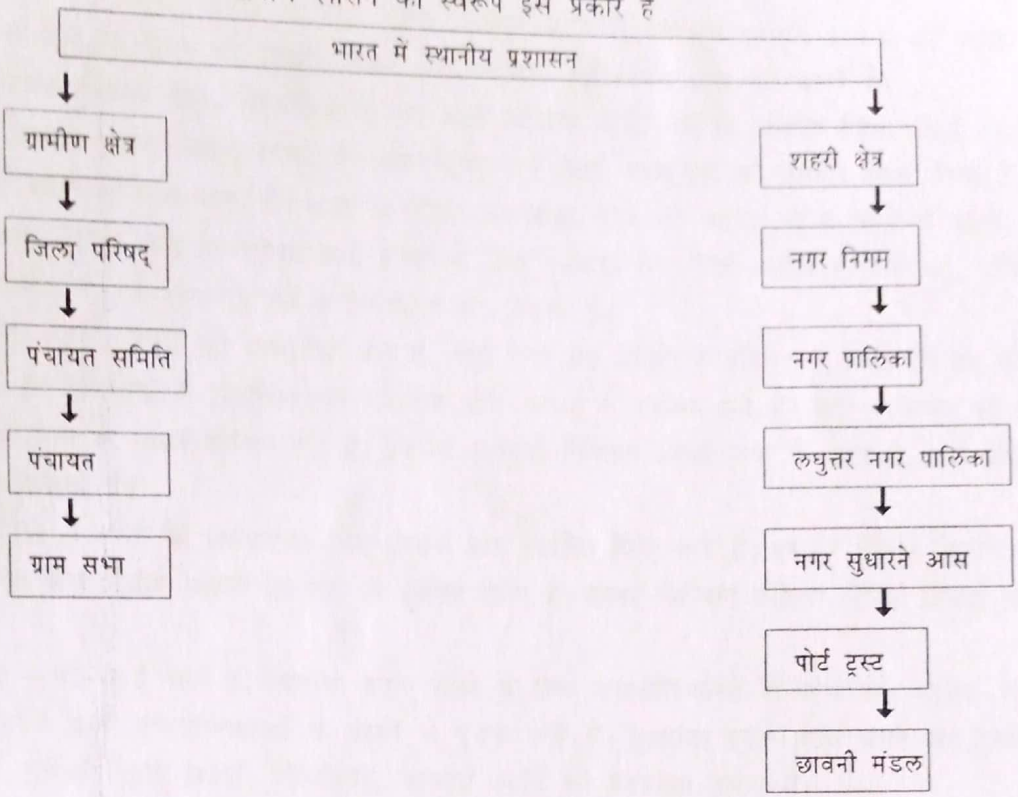

सन् १९५० में स्वतंत्र भारत का नवीन संविधान लागू हुआ। इसके साथ ही स्थानीय स्व–शासन ने एक नए दौर में प्रवेश किया। स्थानीय स्व–शासन की राज्यों की कार्य सूची के अंतर्गत रखा गया। संविधान की धारा–४० में स्पष्ट रूप से वर्णित है कि राज्य का कर्तव्य होगा कि ग्राम पंचायतों का इस ढंग से संगठन करें कि वे स्व–शासन की इकाइयों के रूप में कार्य कर सकें। इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि भारत में स्थानीय शासन का वर्तमान ढांचा ब्रिटिश शासन की देन है। स्वतंत्र भारत संविधान में स्थानीय स्व–शासन का वही रूप रखा गया, जो ब्रिटिश शासन काल में प्रचलित था। अत: भारत का वर्तमान स्थानीय प्रशासन दो प्रणालियों में विभक्त है –(१) ग्रामीण क्षेत्र, (२) शहरी क्षेत्र।

(१) ग्रामीण क्षेत्र –

- *जिला परिषद्* – जिला स्तर पर जिला परिषद का निर्माण किया जाता है।
- *पंचायत समिति ग्रामीण* – स्थानीय स्व–शासन की कार्यप्रणाली की जांच करने तथा उसमें सुधार लाने हेतु समितियों का गठन किया गया। खंड स्तर पर पंचायत समितियों का गठन किया जाता है।
- *ग्राम पंचायत* – ग्राम स्तर पर पंचायत का गठन किया जाता है।
- *ग्राम सभा* – ग्रामीण क्षेत्र का सबसे निम्नतम स्तर है। वे सभी व्यक्ति जिनका नाम मतदाता सूची में है, ग्राम सभा के सदस्य होते हैं। इस में स्वयं जनता प्रतिनिधि होती है।
- स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ग्रामीण स्थानीय स्व–शासन को नगरीय स्थानीय प्रशासन से पृथक कर दिया गया ग्रामीण स्थानीय स्व–शासन की समस्याओं का निपटारा केंद्र एवं राज्य सरकार करते हैं। राज्यों में यही कार्य पंचायती विभाग एवं केंद्र में सामुदायिक विकास विभाग के सुपुर्द है।

(२) शहरी क्षेत्र – शहरी क्षेत्र में स्थानीय स्व–शासन का उत्तरदायित्व पूर्ण रूपेण राज्य का है। स्वतंत्र भारत में स्थानीय स्व–शासन राज्य का विषय है। विभिन्न राज्य अपने अपने क्षेत्र में कानून बनाते हैं। अत: नामकरण, कार्यप्रणाली अति में कुछ भिन्नता दिखाई पड़ती है फिर भी देश की स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं में एक रुकता है। भारत में भी ब्रिटेन की भांति स्थानीय स्वायत्त शासन को दो क्षेत्रों ग्रामीण एवं नगरीय, में विभाजित किया गया है। बड़े नगरों में स्थानीय स्वायत्त शासन की इकाई को निगम कहते हैं। मध्यम और छोटे नगरों में यह नगरपालिका कहलाती है।

Scanned with CamScanner

निगम – बड़े महानगरों – मुंबई, चेन्नई, दिल्ली, पटना, रायपुर आदि में स्थानीय स्वायत्त शासन की इकाई का नाम निगम है। निगमों की स्थापना राज्य की व्यवस्थापिका द्वारा विशिष्ट अधिनियम द्वारा की जाती है।

नगरपालिकाएं – राज्य सरकारों द्वारा नगरपालिकाओं का गठन विशिष्ट अधिनियम के अंतर्गत किया जाता है। नगरपालिका की स्थापना का आधार अलग–अलग राज्यों में अलग–अलग है कहीं जनसंख्या को आधार माना जाता है। कहीं उस क्षेत्र की आय को ध्यान में रखा जाता है। कहीं पर दोनों जनसंख्या वाले को आधार माना जाता है। नगर पालिका परिषद् में सर्वोच्च शक्ति निहित होती है। परिषद् सभी कार्यों के लिए उत्तरदाई है। परिषदें अपनी शक्तियों की, समितियों, कार्यकारी अधिकारी, सभापति, उप–सभापति को प्रत्यायोजित कर सकती है।

नगर क्षेत्र समितियाँ – जिन शहरों की जनसंख्या कम है, वहाँ नगर क्षेत्र समितियाँ गठित की जाती है। इन की सदस्य संख्या कम होती है इन समितियों में निर्वाचित एवं मनोनीत दोनों प्रकार के सदस्य होते हैं। नगर पालिका की तुलना में इनका कार्य क्षेत्र एवं आय के साधन सीमित होते हैं। इन पर सरकारी नियंत्रण काफी मात्रा में रहता है, उन्हें छोटी नगर पालिका भी कहा जा सकता है।

छावनी बोर्ड – सैनिक – स्थलों के प्रबन्धन के लिए छावनी बोर्ड स्थापित किए जाते हैं। इन पर सैनिक विभाग का पूर्ण नियंत्रण रहता है। इनका कार्य केवल छावनी क्षेत्र तक ही सीमित रहता है। इनका निरीक्षण परीक्षण सैनिक नियमों के अनुसार किया जाता है।

नगर–सुविधा न्यास – बड़े–बड़े नगरों की व्यवस्था बनाए रखने के लिए नगरपालिकाओं के साथ नगर–सुधार–न्यास की स्थापना की गई है। इनके कार्य नगरपालिकाओं के कार्यों से पृथक होते हैं। मुख्यता इनके कार्य नगर का सुव्यवस्थित विकास जैसे– पार्कों, सड़कों, खुले स्थानों, शौचालयों, बाजारों आदि की व्यवस्था करना है।

पोर्ट ट्रस्ट – बड़े–बड़े बंदरगाहों के पोर्ट ट्रस्ट की स्थापना की जाती है जैसे – मुंबई, कोलकाता, चेन्नई, विशाखापट्टनम, कोचीन आदि पोर्ट ट्रस्ट के सदस्य वाणिज्य और व्यापार संस्थाओं द्वारा चुने जाते हैं। इन का सभापति सरकारी व्यक्ति होता है। उनके प्रमुख कार्य पूर्ण संबंधी मामलों का प्रबन्ध, बंदरगाह की रक्षा, माल का प्रबन्ध, यात्रियों को सुविधायें देना, सामान उतारना–चढ़ाना आती है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से भारत वर्ष प्रजातंत्र की स्थापना में स्थानीय स्व–शासन का विशेष महत्व रहा है। ग्रामीण व नगरीय दोनों ही क्षेत्रों में कई प्रकार के स्थानीय निकाय कार्यरत हैं। ग्रामीण व नगरों के आकार में जनसंख्या–वृद्धि के कारण पर्याप्त परिवर्तन हुआ है। इस परिवर्तन के साथ–साथ स्थानीय निकायों की आवश्यकता अब पहले से कहीं अधिक बढ़ गई है क्योंकि इनकी समस्याओं को दूर करने का उत्तरदायित्व स्थानीय निकायों का होता है।

संदर्भ सूची

माहेश्वरी, एस०आर० –भारत में स्थानीय प्रशासन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, पृष्ठ संख्या ५

शर्मा, हरिश्चंद्र –भारत में स्थानीय प्रशासन, कॉलेज बुक डिपो जयपुर, पृष्ठ संख्या १२

अवस्थी, अमरेश्वर एवं अवस्थी, प्रकाश आनंद –भारतीय प्रशासन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा–३, पृष्ठ संख्या १, ३

वही, पृष्ठ संख्या ४, ५

वही, पृष्ठ संख्या ४

वही, पृष्ठ संख्या ४

वही, पृष्ठ संख्या ५

वही, पृष्ठ संख्या ५

वही, पृष्ठ संख्या ५

वही, पृष्ठ संख्या ६

वही, पृष्ठ संख्या ६

वही, पृष्ठ संख्या ११

Scanned with CamScanner

वही, पृष्ठ संख्या ११
शर्मा, हरिश्चंद्र –भारत में स्थानीय प्रशासन, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, पृष्ठ संख्या १३
वही, पृष्ठ संख्या १३
वही, पृष्ठ संख्या १४
वही, पृष्ठ संख्या १४
वही, पृष्ठ संख्या १४
अवस्थी, अमरेश्वर एवं अवस्थी, प्रकाश आनंद –भारतीय प्रशासन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा–३, पृष्ठ संख्या १२,
वही, पृष्ठ संख्या १३
वही, पृष्ठ संख्या १३
वही, पृष्ठ संख्या १३
वही, पृष्ठ संख्या १३
वही, पृष्ठ संख्या १३, १४
शर्मा, हरिश्चंद्र –भारत में स्थानीय प्रशासन, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, पृष्ठ संख्या १५
वही, पृष्ठ संख्या १७
चोपड़ा, सरोज –स्थानीय प्रशासन, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पृष्ठ संख्या २९, ३०, ३२
वही, पृष्ठ संख्या ३३, ३४
वही, पृष्ठ संख्या ३६
वही, पृष्ठ संख्या ३८
माहेश्वरी, एस०आर० –भारत में स्थानीय प्रशासन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, पृष्ठ संख्या २१
शर्मा, हरिश्चंद्र –भारत में स्थानीय प्रशासन, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, पृष्ठ संख्या २६
माहेश्वरी, एस०आर० –भारत में स्थानीय प्रशासन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, पृष्ठ संख्या २४०
वही, पृष्ठ संख्या ४१
चोपड़ा, सरोज –स्थानीय प्रशासन, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पृष्ठ संख्या ४०
वही, पृष्ठ संख्या ४०
वही, पृष्ठ संख्या ४४
वही, पृष्ठ संख्या ४४
वही, पृष्ठ संख्या ४४
वही, पृष्ठ संख्या ४४
वही, पृष्ठ संख्या ४१
वही, पृष्ठ संख्या ४१
वही, पृष्ठ संख्या ४२, ४३
वही, पृष्ठ संख्या ४३

Scanned with CamScanner

हिन्दी और लोकभाषाओं में लोकजीवन

डॉ० आस्था तिवारी

सहा. प्रा. रायपुर, छत्तीसगढ़

मनुष्य जैसे जैसे सभ्यता की ओर बढ़ता गया प्रकृति से दूर होता गया। प्रकृति का नैसर्गिक सौंदर्य आँखों से दूर होता चला गया और भौतिकता इस पर हावी होती जा रही है लेकिन शांति की तलाश उसे बराबर रहती है। वह हमें मिलती है हमारी लोक संस्कृति में। लोक साहित्य किसी राष्ट्र की संस्कृति के दर्शन का माध्यम होता है।भगवान राम को देखकर शबरीभावविभोर हो जाती है दुनियादारी से परे होकर चख चखकर बेर खिलाती है। प्रेम और भक्ति में डूबी शबरी के प्रेम सरलता को देखकर वे भी अभिभूत हो जाते हैं उसके निर्मल,निष्कपट प्रेम को देखकर वे नवधा भक्ति का उपदेश देते हैं-

नवम सरल सब सन छलहीना।
ममभरोसहियँहरष न दीना।।
नव महुंएकउजिन्हकेंहोई।
नारि पुरुष सचराचर कोई।।

लोकाचार से दूर अभिमान रहित, मिथ्या आडम्बर से दूर स्वाभाविकता लिए यही तो है लोकमानस की पहचान। लोक मानस में 'सर्वेभवन्तुसुखिन:' का भाव रहता है। कबीरदास ने कहा है-

कबीरा खड़ा बाजार में, सबकी माँगे खैर न काहू से दोस्ती, न काहू से बैर।

हमारा विशाल जनमानस जो स्वार्थ से परे आपस में सुख दुख बाँटता सामाजिक और सांस्कृतिक सूत्र से आपस में जुड़ा रहता है। किसी से अत्यन्त निकटता दिखाए बगैर सभी की खैरियत की दुआ करता है।

'लोक' शब्द का अर्थ

'लोक' शब्द से ही 'लोग' शब्द की व्युत्पत्ति मानी जाती है जिसका तात्पर्य है सर्व साधारणजनता। डॉ.बार्कर ने 'फोक' अर्थात 'लोक' शब्द की व्याख्या करते हुए लिखा है कि फोक शब्द से सभ्यता से दूर रहने वाली किसी पूरी जाति का बोध होता है। महाभाष्यकारपतन्जलि ने भी जनसाधारण के अर्थ में 'लोक' शब्द का व्यवहार किया है। महर्षि व्यास ने महाभारत ग्रन्थ को सामान्य जनता के ज्ञान चक्षु खोलने वाला ग्रन्थ कहा है। हिन्दी के सुप्रसिद्ध विद्वान हजारीप्रसादद्विवेदीजी ने 'लोक' शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम्य में सीमित न करके नगरों व गाँवों की समस्त जनता से लिया है। जो व्यावहारिक ज्ञान से सरोकार रखती है।

हिन्दी व लोकभाषाओं में निहित लोकजीवन

विष्णु खरे ने अपने साक्षात्कार में कबीर की ठेठ भाषा का उदाहरण देते हुए कहा है कि "लोकभाषा में लिखकर ही आप लोकसंस्कृति से जुड़ पातेहैं और उसी से कविता जिन्दा भी होती है।" आगे उन्होंने यह भी कहा कि "लोकभाषा ही जीवित रहेगी और लोकभाषा में लिखा साहित्य ही जीवित बचेगा।" हिन्दी के प्राचीन कवि तुलसी सूर, कबीर, घनानन्द हों या आधुनिक कवि नागार्जुनआँचलिक कथाकार फणीश्वर नाथ रेणु, सभी का साहित्य हमें लोक जीवन से जुड़े ज्ञान का अनुभव कराता है। कबीर के दोहे हों या मानस गान, घर घर में गाये जातेहैं। पं. रामनरेश त्रिपाठी ने सन् 1929 ई. में अपनी कविता कौमुदी भाग -5 (ग्राम गीत) में लोक गीतों का संग्रह किया था। प्रसिद्ध साहित्यकार केदारनाथ सिंह ने भोजपुरी के संबंध में कहा कि 'भोजपुरी हमारा घर है और हिंदी देश'। हिंदी की विभिन्न बोलियाँ (उपभाषाएँ) है जैसे पूर्वी हिन्दी में अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी, पश्चिमी हिन्दी में ब्रजभाषा, बांगरु, कन्नौजी, बुन्देली इनके अलावा भोजपुरी, राजस्थानी, मैथिली, मगही, कुमाँउनी आदि। सभी हिन्दी की शक्तियाँ है। हिन्दी की ये लोक भाषाएँ जहाँ विभिन्नता लिए हुए हैं वहीं अनेकता में एकता लिए हुए हैं ऐसा हमें कहना चाहिए क्योंकि भाषिक संरचना में भले भिन्न हो,कंही समानता लिए भी हैं लेकिन सांस्कृतिक रूप से ये आपस में जुड़ी हुई है। क्षेत्रगत इनका रूप अलग भले है लेकिन तीज-त्यौहार रीति-रिवाज आदि में अलग-अलग नामों से हम एक ही तरह से मनाते हैं। वही कहावतें हिन्दी में हैं वही छत्तीसगढ़ी में, बुन्देली, अवधी में, वही सोहर गीत, विवाहगीत सभी में है। इसलिए भारतीय संस्कृति विभिन्नता में एकता लिए हुए है। विशाल जनमानस के अनुभव उनके लोक विश्वास को और भी गहरा बनाते हैं। लोकभाषाएँ उस क्षेत्र के लोक जीवन की झलक अपने लोकगीतों, लोककथाओं, लोक मान्यताओं के माध्यम से देती है।

प्रकृति में लोकजीवन

प्राचीन काल मेंमनीषियोंने सृष्टि की रचना में पंचतत्व आकाश, वायु, अग्नि, जल,और पृथ्वी के महत्त्व को स्वीकार किया है किन्तु प्रकृति की गोद में पैदा हुआ मनुष्य उसकी देन को भूल जाता है अपने लाभ के लिए जैसे जैसे उसने प्रकृति को नुकसान पहुँचाया वैसे वैसे संतुलन बिगड़ता गया। यही कारण

Scanned with CamScanner

है कि आधुनिक मनुष्य की स्वार्थ लोलुपता ने जैसे- जैसे पर्यावरण को नजरअंदाज किया वैसे वैसे प्रकृति का प्रकोप किसी न किसी आपदा के रूप में सामने आया है। ऋग्वेद में प्रकृति का मानव से साहचर्य व उसके उपागमों जैसे ग्रहों, बादल, जलस्त्रोतों, वृक्ष,पशु पक्षी, उनकी महिमा का गुणगान है। लोक मानस प्रकृति के महत्त्व को समझता है इसलिए प्रकृति के विभिन्न रूपों के प्रति भक्ति भाव से ओतप्रोत रहते हुए प्रकृति की रक्षा का कार्य होता है। सूर के काव्य में वनदेवी गाँव वालों की रक्षा करती है। पहाड़ी और जनजातीय क्षेत्र में बूढ़ा देव या ठाकुर देव की पूजा की जाती है।

ग्रहों का पूजन: उत्तर प्रदेश और बिहार का खास त्यौहार छठ पूजा पूरी श्रद्धा व धूमधाम से मनाया जाता है सूर्य को पुत्र प्रदान करने वाले देवता के रूप में पूजा जाता है और उनकेनाम से छठ का व्रत रखा जाता हैफिर अर्घ्य देते हुए गाती हैं 'हाली हाली उग ए अदित मल, अरघदियाउ'।

बादल : वर्षा का संकेत लेकर आए बादलों को देखकर पूरे संसार में खुशहाली छा जाती है। बादल से मानवअपने सुख दुःख को भी बाटते हैं। कालिदास के मेघदूत में बादल यक्ष के वियोग व व्यथा का सन्देश लेकर यक्षिणी के पास सन्देश लेकर ही नहीं जाते बल्कि मेघ के मुख से दारुण व्यथा को सुनकर यक्ष को शाप मुक्त भी कर दिया जाता है। नागार्जुन की कविता में बादल पर मुग्ध होकर हंस मानसरोवर में क्रीडा करते हैं। निराला के बादल क्रांति के प्रतीक हैं। सुमित्रानंदनपन्त की कविता में बादल सुरपति का अनुचर,जगत्प्राणचातक के जीवनधर होकर विभिन्न रूपों के साथ साथ ही कृषक जीवन का आधार हैं।

सुरपति के हम हैं अनुचर,
जगत्प्राण के भी सहचर
मेघदूत की सजल कल्पना,
चातक के चिर जीवनधर,
मुग्ध शिखी के नृत्य मनोहर,
सुभग स्वाति के मुक्ताकर
विहग वर्ग के गर्भ विद्यायक
कृषक बालिका के जलधर

सुमित्रानंदनपन्त

वृक्षों के प्रति सम्मान: पेड़-पौधे, वृक्ष हमारे लिए जीवदायक माने जाते हैं। शुध्द वायु के लिए ये अत्यंतआवश्यक है। पेड़-पौधों से ही फल, वस्त्र, आवास ईंधन विभिन्न प्रकार की उपयोगी वस्तुएँ हमें प्राप्त होती है। वैज्ञानिक रूप से पीपल का वृक्ष सबसे अधिक आक्सीजन देने वाला होता है। लोक मानस इसमें देवता का वास मानकर इनकी पूजा करते हैं और इस वृक्ष को नुकसान पहुँचाना यानि देवता को कष्ट देना ऐसा मानते हैं। इसी प्रकार तुलसी वर्षों से घर में पूजी जाती है जिसके औषधीय महत्व से हम अनभिज्ञ नहीं हैं।वट वृक्ष की पूजा पति की लम्बी उम्र के लिए की जाती है। आंवला नवमी की पूजा मोक्ष प्राप्ति के लिए की जाती है। हमें यह ज्ञात है कि आरोग्य प्रदान करने में वृक्षों का महत्त्व है।

पशु–पक्षियों संबंधी विश्वास: कौए का मुंडेर पर बैठकर बोलना अतिथि के आगमन की सूचना देता है। गाय को भारतीयसंस्कृति में माता का रूप मानते हैं। धार्मिक और आर्थिक दृष्टि से गाय का अत्यंत महत्व है। स्वप्न में भी गाय और बछड़े का दर्शन शुभ माना जाता है। कहा जाता है पहले आपदा का संकेत पशु और पक्षियों की हलचल और उनको इधर से उधर भागने की बचैनी से लोगों को हो जाता था। ऋग्वेद में पक्षियों से शुभ वचन बोलने के कामना ऋषि-मुनियों की वाणी में मिलती है। जायसी के पद्मावत में नागमती विरह का सन्देश देने काग और भौंरे को पुकारती है 'पिउ से कहेहुसन्देशडा, हे भौंरा! हे काग! सो धनिबिरहेजरिमुई, तेहि क धुवाँहम्ह लाग'।

कहावतों में लोकजीवन

पुरखों द्वारा अपना अनुभव या सहज रूप से सीख देने या गुस्से में बहुत कम शब्दों में कह दिया जाता था वही आगे चलकर कहावतें बनती गईं। जैसे झूठे लोगों को छत्तीसगढ़ी में लबरा कहते हैं इसी लबरा शब्द पर एक कहावत बनी 'लबरा के नौ नागर' जिसका अर्थ होता है सफेद झूठ। को कहावतों में मुझे घाघ की कहावतें याद आती है। भारत के कृषक वर्ग के लिए उनकीकहावतें पथ प्रदर्शन करती है। उनकी लोकजीवन पर आधारित कहावतें आज भी समाज में प्रचलित व चरितार्थ होते दिखती हैं।

घाघ की स्वास्थ्य संबंधी कहावत है-

'रहै निरोगी जो कम खाय
बिगरे न काम जो गम खाय'

घाघ व भड्डरी कृषि व मौसम संबंधी कहावतें तो किसानों को मुखाग्र रहती है।

'शुक्रवार की बादरी, रही सनीचरछाय।
तो यों भाखेभड्डरी, बिन बरसे न जाए।
अरवै तीज तिथि के दिना, गंरूहोवेसंजूत।
नोभारवैंयोभड्डरी, उपजै नाज बहुत।'

अर्थात बैसाख में अक्षय तृतीया को गुरूवार पड़े तो खूब अन्न पैदा होता है।

Scanned with CamScanner

बादल देखकर लोग अनुमान लगाते थे कि 'सफेद बादल वर्षा करते है' और 'काले बादल केवल गरजते और डराते हैं इस मान्यता के साथ यह कहावत बोली जाती है।

छत्तीसगढ़ी में एक कहावत है - 'भूरा मेघा पानी दे, काला मेघा जी डरवावं।'

हिन्दी में निरक्षर व्यक्ति के लिए कहावत है 'खेती धन के नास, जब खेले गोसईंयानाम' 'काला अक्षर भैंस बराबर'।

लोक संगीत में लोकजीवन

आधुनिक दौर में मनोरजंन के साधन इंटरनेट, टी.वी., फिल्म, माल-संस्कृति आदि है। लेकिन प्रचीन काल से आज तक आधुनिकता के इस दौर में भी लोक संगीत और लोक गीतों की धुन हमें सम्मोहित करती है। ग्रामीण क्षेत्रों में गाय चगते हुए चरवाहों को गीत गुनगुनाते,खेतों में व विभिन्न अवसरो पर महिलाओं द्वारा गाये जाने वाले गीत कितने मनमोहक लगते लोक संगीत के सामंजस्य से मनमोहक हो जाते हैं। लोक संगीत में एक ही वाद्य पर निकली लोकध ुन भी मधुर और आडम्बरहीन होती है। कृष्ण की मुरली की तान पर पूरे गाँव की गोपियाँ दौड़ पड़ती थीं। इकतारा, चिकारा, तुरही, मांदर,ढोलक, बांसुरी यही तो लोकजीवन के वाद्य यन्त्र हैं जिन्हें वह स्वयं तैयार करता करता है।

लोकगीतों में लोकजीवन

भारतीय संस्कृति का सहज और आत्मीय चित्रण हमें लोक गीतों के माध्यम से मिलता हैलोक गीत लोक मानस के मनोरजंन का साधन होता है। लोक गीतों को एकल रूप से या सामूहिक रूप से प्रस्तुत किया जाता है। विभिन्न अवसरों पर विभिन्न प्रकार से इसे गाया जाता है संस्कार संबंधी गीत, व्रत-त्यौहार संबंधी गीत,, ऋतु संबंधी गीत भिन्न -भिन्न अवसरों पर गाया जाता है।

सोहर गीत - भोजपुरी, मैथिली, ब्रज, छत्तीसगढ़ी, अवधी, पूरे भारतवर्ष में शिशु के जन्म पर सोहर गीत गाया जाता है। भाई के घर शिशु जन्म के अवसर पर बहन बधाई देने जाती और काजल लगाने का नेग करती है। खुशी के अवसर परमायके जाने की लालसा वह इस प्रकार व्यक्त करती है- 'हमारो भाई के होयहवै लाले हम काजरआँजे ल जावो हो'

विवाह संबंधी लोक गीत - बिदाई के समय माता-पिता, भाई-भाभी सभी दुखी है रो रहे हैं लेकिन अलग अलग संबंधों के दुख दर्शाने वाले इस गीत में भाभी को कठोर हृद्य बताया जा रहा है-

'दाई मोर रोव थे नदिया बहत हे
ददारोवय छाती फाटय हो, हाय हाय मोर दाई
भाई रोवय समझाये,भौजी नयन कठोरे हो।'

भोजली गीत- भोजली पर्व भारत के विभिन्न प्रान्तों में धूमधाम से मनाया जाता जाता है। कृषक वर्ग के उल्लास का प्रतीक यह पर्व भोजली तैयार होने फिर उसके विसर्जन तक चलता है विसर्जन के समय महिलाएं भोजली गीत गाते हुए गंगा मैया से सुख समृद्धि की कामना करती हैं। भोजली गीत किसान जीवन के हर्षोल्लास के साथ ही कृषक बालिका की खुशी,उसके भाई के प्रति स्नेह व सामाजिक सद्व्यवहार को व्यक्त करने के साथ ही नदी,तालाब आदि जल स्त्रोतों के प्रति श्रद्धा का भाव रखते हुए उसके दाय के प्रति सम्मान व्यक्त करता है।

देवी गंगा /देवी गंगा लहर तुरंगा
हमरोभोजली देवी के /भीजे आठों अंगा।

लोकनृत्य में लोकजीवन

मनुष्य श्रम के बाद विश्राम के क्षणों में उल्लास के साधन ढूंढता है। ग्रामीण हों या जनजातीय लोक,लोकनृत्य उनके उल्लास को व्यक्त करता है। लोकनृत्य में विभिन्न वाद्य यन्त्र हो या वेशभूषा या फिर श्रृंगार के साधन सभी वह खुद ही प्रकृति से सृजित करता है। फसल तैयार होने पर, त्यौहार के अवसर पर या श्रम के दर्द को भूलने हेतु ये लोकनृत्य लोक की सामूहिकता को व्यक्त करता है। सुआ नृत्य, गौर नृत्य, करमा नृत्य, सरहुलनृत्य,डंडा नृत्य आदि। पति के वियोग का चित्रण सुआ नृत्य के माध्यम विशेष रूप से आकर्षित करता है-

पहिली गवन के डेहरी बईठारे
छांड पिया जाथेबनिजब्योपार
काकर संग खईहंव, काकर संग खेलिहँव
का देख रइहंव मन बांध, रे सुअना ह्रुद्य

लोकगाथा में लोकजीवन

लोकगाथाओं में भरथरी के साथ चनैनी, पंडवानी, लोरिक चंदा, बांस गीत, ढोलामारू, अहिमनरानी, रेवारानी, फूलबासन लोकप्रिय हैं। नारी मन की भावनाओं के चित्रण के साथ ही क्षेत्र विशेष से जुडी मान्यताओं की सफल अभिव्यक्ति लोकगाथाओं के माध्यम से होती है। भरथरी के जन्म के पहले उनकी माता संतान की लालसा लिए अपने दु:ख को इस प्रकार व्यक्त करती है-

Scanned with CamScanner

स्वदेशी,स्वावलंबन से आत्मनिर्भर भारत का सपना : एक पहल

डॉ.आस्था तिवारी
शासकीय नवीन महाविद्यालय बेरला, जिलाबेमेतरा

भारत वर्ष की पहचान भारतीय संस्कृति से है वही संस्कृति जिसमें हमारे पूर्वजों ने ज्ञान, विज्ञान, ज्योतिष, नैतिक शिक्षा, वेद, उपनिषद आदि ग्रंथों का समावेश है । रामायण,रामचरितमानस का ज्ञान एक ओर मर्यादित जीवन की शिक्षा देता है वहीं गीता से हमें कर्मशीलता की प्रेरणा मिलती है । अध्यात्म हमें ईश्वर पर विश्वास करके आत्मशक्ति प्रदान करता है । भारत में विभिन्न जाति और धर्म को मानने वाले रहते है किन्तु सांस्कृतिक विभाजन के स्थान पर यही भारतीय संस्कृति के विभिन्न रंग है जो इसे बहुरंगी बनाते है और राष्ट्र को एक सूत्र में बांध रखते है । उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक सांस्कृतिक विविधता लिए हुए भारत के लोग के भाव समान है । समाज के प्रति कर्तव्य, बुजुर्गों के प्रति सम्मान, छोटों के प्रति स्नेह और आपसी भाईचारा और प्रेम की शिक्षा हमारी संस्कृति देती है ।

भूमंडलीकरण की ताकतों ने हमारी संस्कृति पर चोट की और अपनी संस्कृति का हिस्सा बनाया । वर्तमान युग में वैश्वीकरण के दौरने आधुनिकता का ऐसा रंग लिया की हम अपनी संस्कृति को भूलते चले गए और विकास की दौड़ और आधुनिक दिखने की चाह में पाश्चात्य संस्कृति के रंग ढंग में ढलते चले गए । वैश्वीकरण के युग में उदारीकरण को बढ़ावा मिला और नई संस्कृति जोड़ शोर से बढ़ती चली आयी और उसके दोनों हाथों ने मनुष्य को नहीं बल्कि उसके मस्तिष्क पर पूरी तरह से कब्जा कर लिया । यह वही है जिसे हम उपभोक्ता संस्कृति के नाम से जानते हैं । विदेशी चैनलों,आधुनिक संचार माध्यमों के माध्यम से भारत में अनगिनत चैनलों के माध्यम से शहरों गांवों के अंतिम द्वार तक ऐसे ऐसे उत्पादों को खरीदने के लिए प्रेरित किया जाता है जो अनावश्यक रहते हैं । सामाजिक प्रतिष्ठा के लालच में व अपने आपको आधुनिकता की दौर में बनाए रखने के लिए शिक्षा से लेकर वस्त्र, वाहन, खाद्य पदार्थ, पेय, कास्मेटिक,पर्यटन सभी क्षेत्रों में लोग नित नए प्रयोग कर रहे हैं । इस उपभोक्ता वादी संस्कृति ने हमारी आवश्यकताओं को इतना बढ़ा दिया है की हम अपने ही परिवार के बुजुर्ग, भाईबन्धु, परिवार को बोझ समझने लगे हैं और मूलभूत सहायता करने में भी अपने आप को असमर्थ पा रहे हैं । नवपूंजीवाद ने वर्ग अन्तराल को और बढ़ाया हाशिए

Scanned with CamScanner

के लोग आज भी उसी स्थिति में हैं |यह एक व्यक्ति तक सीमित नहीं बल्कि पूरे परिवार और पूरे समाज और पूरे राष्ट्र को प्रभावित कर रही है|

युद्ध,उन्माद और वर्चस्व, साम्प्रदायिकता की राजनीति की विषम परिस्थितियोंमें महात्मा गांधी जो राजनीतिक ,आध्यात्मिक और सामाजिक नेता के रूप में शांति ,प्रेम , अहिंसा सत्य के लिए पूरे विश्व के आदर्श हैं |जिनकी विचारधारा से प्रभावित होकर विदेशों में भी नेलसनमंडेला,मिखाइलगोर्बाच्योव,आंग-सांग-सू-की जैसे प्रभावशाली नेताओं ने अपने देश में परिवर्तन लाने के प्रयास किये |सादा जीवन जीने वाले सत्य और अहिंसा के पुजारी म गांधी के विचार और दर्शन भारत में ही नहीं पूरे विश्व में व्यापक हैं| 2/8

महात्मा गांधी वैश्वीकरण के प्रभाव को समझ चुके थे इसलिए उन्होंने कहा था कि - "मैं यह नहीं चाहता की मेरे घर को ऊँची चारदीवारी से घेर दिया जाये और खिड़कियों को मजबूती से बंद कर दिया जाए. मैं चाहता हूँ कि सभी संस्कृतियों का प्रवाह मुक्त रूप से मेरे घर में हो परन्तु मैं उस प्रवाह में उखड़ने से इंकार करता हूँ |" गांधीजी किसी संस्कृति के विरोधी नहीं थे बल्कि वे उसके प्रभाव में आ जाने के विरोधी थे |गांधीजी खिड़की दरवाजे खुले रखने के पक्षधर किन्तु उन्होंने कहा था कि "विदेशी भाषाओं की ऐसी आंधी न आ जाये कि मैं औंधे मुंह गिर पड़ू |" किन्तु आधुनिक मनुष्य विदेशी संस्कृति के प्रवाह में जड़ों से कटकर अनियंत्रित रूप से मुक्त होकर आगे बढ़ता चला गया बिना उसकी गहराई का अनुमान लगाये | आज स्थिति यह है कि सोने की चिड़िया कहा जाने वाला भारत भूमंडलीकृत व्यवस्था पर निर्भर होता हुआउसमें गुम होता जा रहा है |

महात्मा गांधी ने केवल उपदेश नहीं दिया बल्कि अपनी एक एक बात और विचार को अपने जीवन में उतारा | वकालत की पढाई करके लन्दन से जब वे वापस लौटे तब अपने कटु अनुभवों से उन्होंने यह सिखाया की किसी भी परिस्थिति में अपने धर्म संस्कृति, अपने देश और स्वाभिमान व आत्मसम्मान ,सिद्धांतों के प्रति हमें दृढ रहना चाहिए |सत्य और अहिंसा की राह पर चलने के लिए आत्मिक बल आवश्यक होता है | सत्य और अहिंसा के पुजारी ने बिना खड्ग और ढाल के पूरे देश को उपनिवेशवादके खिलाफ एकजुट किया | जैसे ही उन्होंने आश्रम खोला वंहा चरखा बैठाया ,खुद चरखा चलाना सीखा और बुनाई के हुनर जान लेने के बाद कई बुनकर तैयार किये | इसमें उन्होंने कई व्यावहारिक दिक्कतों का सामना किया किन्तु हार नहीं मानी|हिन्द स्वराज में उन्होंने इस बात को स्वीकार है कि "चरखे के जरिये हिन्दुस्तान की कंगाली मिट सकती है और जिस उपाय से भुखमरी भाग सकती हो उस उपाय से स्वराज भी मिलेगा ,यह तो सभी समझ सकते हैं|'

Scanned with CamScanner

मशीनी युग मे चरखेका मूल्य मूल्य कम आंका गया और औद्योगीकरण मे उसे एक सिरे से खारिज किया जा रहा है किन्तु वर्तमान मे 'चरखा और तकली' को उन सभी स्वदेशी वस्तुओं का प्रतीक माना जाना चाहिए जिनके द्वाराराष्ट्रहित मे आगे बढ़ सकते हैं |भारत के आत्मनिर्भरता के आह्वान पर प्रश्न उठाये गए कि कई ऐसे बड़े क्षेत्र हैं जिनमे हम आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ही नही सकते |धीरे धीरेहर क्षेत्र मे नही तो कम से कम ऐसे क्षेत्रों मे कदम आगे बढाया जाना चाहिए जिनमे हम सक्षम हैं |मोबाइल और सूचना के युग ने विक्रेता और क्रेता को सीधे जुड़ने का अवसर प्रदान किया है किन्तु आज भी लाभ बिचौलिए उठा रहे हैं |

गांधी सर्वोदय के सिद्धांत पर विश्वास करते थे |सर्वेभवन्तुसुखिनः की कामना करते थे |वे स्वयं गाँव गाँव घूमकर किसानों ,मजदूरों ,बुनकरों जैसे श्रमशील लोगों के साथ इसलिए किन प्रकार की कठिनाइयों से वे जूझते थे इसका अनुभव था उन्हें |उन्हीं के मे "हिन्दुस्तान के बुनकरों के जीवन ,आमदनी, सूत मिलने मे होने वाली कठिनाई ,उसमें वे कैसे ठगे जाते हैं इसका और अंत मे दिन दिन कैसे कर्जदार होते जा रहे हैं इस सबका पता चला |"फणीश्वरनाथरेणु की कहानी का कारीगर सिरचनआज भी इसका उदाहरण हैकि हस्तशिल्प उद्योग किस प्रकार आज भी हाशिये पर है किन्तु कॉर्पोरेट जगत उनसे कम दाम पर लेकर ऊँचे दाम पर बेच कर मुनाफा कमा लेते हैं |मल्टीनेशनलकम्पनियां हर देश और उनके गाँव तक अपने पैर पसारते जा रही हैं ,हमारी उन पर निर्भरता बढती जा रही है ,जबकि गांधी का चरखा और खादी प्रत्येक गांव को आत्मनिर्भर बनाने की आस पर अन्याय और दमन का प्रतिकार करता हुआ स्वदेशी के महत्त्व कोस्वीकार करता है-:

3/8

खादी के धागे धागे मे ,अपनेपन का अभिमान भरा,

माता का इसमे मान भरा ,अन्यायी भरा,

खादी ही भर भर देशप्रेम का प्याला मधुर पिलाएगी

खादी ही दे दे संजीवन, मुर्दों को पुनः जिलाएगी|

- सोहनलालद्विवेदी

महात्मा गांधी का पूरा जीवन और उनके सिद्धांत हमें सादगी से भरा जीवन जीने की शिक्षा देते हैं |स्वदेशी व स्वावलंबन का गुर सिखाने उन्होंने खुद आश्रम मे चरखा रखा उससे सूत कातता और आश्रमवासियों को भी भी सिखाया | उन्होंने स्वयं सत्य के प्रयोग मे यह बात स्वीकारी की व्यवहारिक दिक्कतें का भी सामना उन्हें करना पड़ा |विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार किया क्यूंकि वे व्यक्तिगत उत्पादन को बढ़ावा देना चाहते थे|वह कहा करते थे कि

Scanned with CamScanner

"यदि आप व्यक्तिगत उत्पादन को लाखों गुना बढ़ा दें तो क्या एक बड़े पैमाने पर उत्पादन नहींकहलायेगा ? बड़े पैमाने पर उत्पादन एक तकनीकी शब्द है जिसका अर्थ कम से कम व्यक्तियों द्वारा जटिल मशीन द्वारा अत्यधिक उत्पादन प्राप्त करना है | मशीनें बहुत सरल होनी चाहिए जिसे लाखों व्यक्तियों के घरों में रखा जा सके |'

गांधीजी ने आत्मनिर्भर गाँव की कल्पना की थी ,वे बुनियादी शिक्षा के पक्षपाती थे,वे व्यक्ति को स्वावलंबी बनाना चाहते थे | उनका यह मानना था उपयोग की वस्तु स्वयं बननी चाहिए इसलिए उन्होंने लघु और कुटीर उद्योगों पर बल दिया जबकि मशीनीकरण के युग ने आत्मनिर्भरता के सिद्धांत को संकुचित कर दिया है | स्वावलंबन पर राष्ट्रकविमैथिलीशरण गुप्त की पंक्तियाँ याद आती हैं -:

"स्वावलंबन की एक झलक पर न्यौछावर कुबेर का कोश"

उद्यमिता से सम्बन्धित जो बनाये विचार गांधीजी ने बीसवीं सदी में दिए थे उन विचारों की प्रासंगिकता आज भी बनी हुई है| जब इक्कीसवीं सदी में पत्नी अस्तेय के साथ संयुक्त रूप से नोबल पुरस्कार जीतने वाले अभिजीतबनर्जीकहते हैं कि भारतीय अर्थव्यवस्था केन्द्रीयकरण से पीड़ित है और यह भी कि ज्यादातर गरीब उद्यमी नहीं बनना चाहते,इसलिए भी गरीबी बड़ी समस्या है|स्वावलंबन समाज को उद्यमिता की ओर ले जायेगा |गांधीजी को यह आभास था कि साम्राज्यवाद और पूंजीवाद को बढ़ावा देना यानिनये अभिजात्य वर्ग — उदय होना | आधुनिक युग में इसी का अनुसरण मध्यवर्ग और निम्नमध्यवर्ग में 4/8
किया जा रहा है |आधुनिक अर्थव्यवस्था ने भूमंडलीकरण और बाजारवाद से प्रेरित उ. संस्कृति की तड़क भड़क से प्रभावित उपभोक्तावादी संस्कृति को बढ़ावा दिया | बाजार की चकाचौंध और मॉल संस्कृति वस्तुओं को ऐसा लुभावना बनाकर पेश करती है कि उपभोक्ता आवश्यकता से अधिक चीजें खरीद ले |पहले लोग वस्तु विनिमय करके न्यूनतम आवश्यकता में जीवनयापन करते हुए भी सुखी थे |वर्तमान युग में हमें यह समझने की जरूरत है की बाजार में कोई किसी का भाई बंधू नहीं होता बाजार की व्यवस्था केवल मुनाफाखोरी पर टिकी है |विज्ञापन और प्रचार प्रसार के द्वारा अपने उत्पाद को बेचना ही उसका कार्य है |नैतिकता और मानवता से इसका कोई सरोकार नहीं होता |उपभोक्ता के लिए ऐसा वातावरण तैयार करना की न चाहते हुए भी वहचीज़े खरीदने को मजबूर हो जाये |हर वस्तु को पाने की होड़ , दिखावे की होड़ ने समाज में ईर्ष्या , भेदभाव ही नहीं उत्पन्न किया बल्कि विषमता की खाई को और गहरा कर दिया है |जबकि गांधी जी का कथन था कि "हर एक आदमी को ,हर हिन्दुस्तानी को इसे अपना धर्म समझना चाहिए की जब जब और जहाँ-जहाँ मिले वहां वह हमेशा गांवों की बनी चीजों का इस्तेमाल करे |"गांधी की सहकारिता की इस अवधारणा के अनुरूप चलकर प्रत्येक गाँव में खेती,पशुपालन,पेयजल व्यवस्था , ग्रामोद्योग और

Scanned with CamScanner

ग्रामीण सेवाओं के समन्वय से पूर्ण रोज़गार देने की व्यवस्था की जा सकती है।गांधी जी स्वदेशी के उपयोग द्वारा जीवन जीने के जरुरी संसाधन लोगों के हाथ में देना चाहते थे।एक खबर आशान्वित करती है कि"देश के प्रमुख उद्योग और वाणिज्य संघठन ने फैसला किया है कि बड़े औद्योगिक समूह १००-१०० ग्रामों को गोद लेंगे और उन्हें मशीन उपलब्ध कराएँगे और आर्थिक मदद भी करेंगे।" यदि ऐसा होता है और इससे लाभ जरुरतमंदों को होता है तब यह सकारात्मक पहल मानी जाएगी।

भूमंडलीकरण से पोषित उपभोक्तावादी संस्कृति ने न केवल वस्तुओं के प्रति होड़ बढ़ाई बल्कि विभिन्न बुराइयों को व अपराधों को जन्म दिया। इसने नयी पीढ़ी को सबसे अधिक प्रभावित किया क्योंकि सबसे बड़ा उपभोक्ता वर्ग वही है किन्तु वही रोजगार की समस्या से सबसे अधिक जूझ रहा है।अधिक से अधिक और हर चीज़ को पाने की चाह में सही और गलत का अंतर न करना हमारी आदत में शामिल होता जा रहा है।मॉल और ब्रांड नाम आज स्टेटससिंबल बनता जा रहा है।संचार क्रांति के साधनों ने बाज़ार को जो सुविधा दी है वह अपने उपभोक्ताकी जानकारी २४ • ७ रख सकता है और विज्ञापनों के माध्यम से पैनी नज़र रख रहा हैऔर नित नए उत्पाद हमारे सामने पेश कर रहा है। गांधीजी और उनके सिद्धान्तऔर उनकी शिक्षा न्यूनतम आवश्यकता के लिए प्रेरित करते हैं, सत्य और अहिंसा का धर्म हमें अपनी चीजों का उपयोग करने व पराई वस्तुओं के प्रति लोभ न करने की ,आवश्यकता से अधिक संग्रहण न करने की शिक्षा देते हैं,स्वदेशी वस्तुओं के उपयोग से रोज़गार तो उत्पन्न होंगे ही सामूहिक सहकारिता भी बढ़ेगी।गांधी ने हमें स्वावलंबनसिखाया,जो हमें निजी स्वार्थों से दूर रखेगा।

इक्कीसवीं सदी में कोरोनावायरस से उत्पन्न महामारी कोविड१९ ने बड़ी बड़ी महाशक्तियों को घुटने टिकवा दिए। महामारी के कारण हमारी सामाजिक और आर्थिक स्थिति डावांडोल हो रहीहै।एक तरफ लाकडाउन के कारण पूरी व्यवस्था लचर हो गयी।उद्योग धंधे बंद और कारोबार चौपट हो गया जिसके कारण विभिन्न स्थानों पर फंसे लोग ,बाहर पढ़ने गए बच्चे और बड़ी तादाद में श्रमिक वर्ग अपने परिवार के साथ जो अपने घरों से दूर रोजगार के लिए गए थे , आवास और भोजन के बिना फंसे हुए थे दूसरी तरफ अपने ही क्षेत्र में रोजगार से जूझते ऐसे लोग जिनका परिवार रोज कमा खा कर चलता है। छोटे छोटे बच्चों को लिए साधन के अभाव में श्रमिक वर्ग बड़ी तादाद में घर पहुँचने के लिए पैदल ही निकल गए।शिक्षा,स्वास्थ्य और आवास जैसी आधारभूत सुविधायें भी बाजारवाद के दौर में आम आदमी की पहुँच से दूर हैं इसका भयावह रूप कोरोनाकाल में उग्र होकर दिखाई दिया।हिंदी के सुप्रसिद्ध कविविनोद कुमार शुक्ल की कविता है 'दुनिया में अच्छे लोगों की कमी नहीं है ' इसी उम्मीद मेंकोरोना के संकट से जूझ रहे लोगों के लिए समाज के बहुत से

5/8

Scanned with CamScanner

लोगों ने मदद के लिए अपने हाथ बढ़ाये|किन्तु वर्तमान में बड़ी संख्या में मजदूरों का शहरों से गाँव की ओर वापस पलायन से रोजगार सृजन की चुनौती और बढ़ गयी साथ ही बंद पड़े उद्योगों को चालू करना भी बड़ी चुनौती है चूँकि इन उद्योगों का आधार श्रमिक हैं |पूरे विश्व में महामारी के कहर ने अमेरिका और चीन का असली चेहरा दुनिया के सामने दिखा दिया | आन्तरिक रूप से महामारी से निपटने के प्रयास हम कर ही रहे हैं |इस बीच चीन ने मौके का फायदा उठाकर सीमा विवाद को जन्म दिया है | नेपाल ने भी अवसरवादिता दिख अमेरिका भारत और चीन के बीच हस्तक्षेप के लिए हाथ बढ़ा रहा है |अमेरि 6/8 साम्राज्यवादी नीतियों की कलई खुल गयी है|भूमंडलीकृत बाजार आधारित व्यवस्था अमेरिका ने आर्थिक शक्ति के दम पर अन्य देशों खासकर विकासशील देशों पर दबाव के लिए नीतियां बनायीं,चीन अपनी अलग शक्ति दिखा रहा है |ऐसे में यदि हम इतिहास की तरफ मुड़कर कर देखते हैं वही परिस्थियाँ अपने नए रूप में हमारे सामने दिखाई दे रही हैं जो स्वतंत्रता आन्दोलन के समय थी अंतर केवल यह था की उस समय ब्रिटिश शासन की दासता से मुक्ति के लिए गांधीजी ने स्वदेशी व स्वावलंबन के लिये आवाज उठाई |

सूचना क्रांति ने बाज़ारवाद को पूरी सुविधा दी कि वह उपभोक्ता की आर्थिक क्षमता का आंकलन करके यूजर का प्रोफाइल सुरक्षित करते हुए उस देश की शक्ति का अंदाजा लगा सके | चीन से बढ़ते तनाव के बीच भारत ने 59 चीनी एप्प पर प्रतिबन्ध लगाया| विशेषज्ञों ने इन्हें भारत के यूजर की निजता व सुरक्षा के साथ साथ ही देश की सुरक्षा,संप्रभुता और अखंडता के लिए खतरा बताया है |वैश्वीकरण के फायदे को नकारा नहीं जा सकता किन्तु परदे के पीछे के नुकसान को नज़रन्दाज करते हुए अपने देश के उत्पाद की उपेक्षा करते चीनी उत्पादों पर निर्भर होते गए फल क्या हुआ चीनीअर्थव्यवस्था सुदृढ होती चली गयी |दूसरी तरफ भारतीय मेधा जो पढाई या नौकरी ,व्यवसाय आदि के लिए अमेरिका जाती थी किन्तु अमेरिका एच 1 बी वीजा को खत्म करने की घोषणा की जिसे बाद में वापस लिया|गांधी जी ने जिस भारतीय ग्रामीण जीवन को केंद्र में रख कर स्वावलंबन और स्वराज की राह दिखाकर आत्मनिर्भर भारत का आह्वान किया था वर्तमान में पुनः उसकी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए 'वोकलफॉर लोकल' अर्थात स्थानीय स्तर पर कलाकारों ,हस्तशिल्पकारों ,स्थानीय स्तर पर बनने वाली वस्तुओं को सहयोग व प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है,साथ ही विश्व बाजार में निर्यात करने की योजना भी बनाई जानी चाहिए |भारत को तकनीकी रूप से सुदृढ करने के लिए भारतीय एप्प बनाने प्रोत्साहित किया जा

Scanned with CamScanner

करने साथ ही उन्नत कृषि के उपायों को तामील में लाकर कृषि के क्षेत्र में ग्रामीण अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने के लिएप्रभावी रूप से लागू करके क्रियान्वयन की आवश्यकता है |संकट में भी धैर्य रखना और चुनौती स्वीकार करना हमारी विशेषता है|एप्प बैन करते ही चीनी अखबार ग्लोबलटाइम्स के संपादक ने तंज कसा कि"अगर चीनी लोग भारतीय उत्पादों का बहिष्कार करना भी चाहते हों,तो वे असल में ऐसे भारतीय सामान नहीं खोज पाएंगे |"इसके जवाब में आनंद महिंद्रा का यह ट्वीट कि "मुझे लगता है कि यह जो इंडिया इंक को पहली बार मिली है ,सबसे प्रभावी और प्रेरक साबित हो सकती है |हमें उकसाने के लिए धन्यवाद |हम इस अवसर को साबित करके दिखायेंगे ",आशावादी होकर चुनौती के स्वीकार्य की ओर इंगित करता है|चुनौती बड़ी है किन्तुतकनीक ने यदि चुनौती दी है तो अवसर भी हम उसी के माध्यम से तलाश कर सकते हैं |मैनेजमेंट गुरु एन.रघुरामन ने रोज़ अपने कालम में ऐसे आम आदमी के बीच से निकले लोगों का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं जिन्होंने इस समय में नए विकल्प चुनकर अपने को बचाए रखा|उनका एक लेख 'चिंगारी बड़े कमरे में एक छोटे बल्ब की तरह है 'शीर्षक में चिंगारी एप्प का उल्लेख करते हुए लिखा है "जैसे ही एप्प बंद हुए चिंगारी एप्प की लोकप्रियता बढ़ी |"विपत्ति में साहस की लौ जलाये रखने की प्रेरणा प्रसून जोशी इन पंक्तियों के माध्यम से देते हैं-:

'एक दिया तुम्हारा और एक लौ है मेरी

टल जाएगी ये काली रात अँधेरी

हम डोर-डोर साहस बटोर लायेंगे

हम हार नहीं मानेंगे' |

न्यूनार्मल, नवप्रवर्तन में शिक्षा, साहित्य,उद्योग,छोटे से बड़े व्यापार, फिल्म उद्योग आदि में ऐसे अनेक उदाहरण देखने को मिले जिन्होंनेमहामारी की विकट चुनौती को अ——— में बदला है |आज मैथिलीशरण गुप्त की पंक्तियाँ को बार बारयाद आती हैं और ह 7/8 अतीत के गौरव से परिचय कराती हैं -:

हम कौन थे, क्या हो गए हैं,और क्या होंगे अभी

आओ विचारें आज मिलकर ,यह समस्याएं सभी

भूलोक का गौरव ,प्रकृति का पुण्य लीला स्थल कंहा

फैला मनोहर गिरि हिमालय ,और गंगाजल कंहा

सम्पूर्ण देशों से अधिक ,किस देश का उत्कर्ष है

Scanned with CamScanner